

तालीम की लड़ाई

'केजी से पीजी तक" मुफ़्त व समतामूलक तालीम के हक़ में और तालीम में व्यापार व मुनाफ़ा और फ़िरक़ापरस्ती का प्रतिरोधी मुखपत्र

अखिल भारत शिक्षा अधिकार मंच का त्रैमासिक प्रकाशन

सम्पादकीय	02
नज़रिया	
शाखाओं को जगह देने के लिए स्कूलों की तबाही	03
नई शिक्षा नीति (एन ई पी): छिपे मक़सद	06
शिक्षा में टेक्नोलोजी का हस्तक्षेप	08



दुनिया की खिड़की	36
पुस्तक समीक्षा	38
सरगर्मियाँ	39
संगठन की रपटें	41
प्रेस विज्ञप्ति	44
श्रद्धांजली	45
कविता : मौमिता आलम	47



समसामयिकी

मणिपुर: अंदरूनी जंग	11
शिक्षा का साम्प्रदायीकरण – शिक्षक के रूप में	
हम क्या करें?	15
कैम्पस में बेड़ियाँ, शीर्ष पर फ़ासीवादी!	21
समान नागरिक संहिता: अगले कदम	25



संपादक : जी शंकर

संपादक मंडल : चतुरानन ओझा (उ.प्र.), फिरोज़ (दिल्ली), लाल्टू (हैदराबाद), राजेश आज़ाद (दिल्ली)

डिज़ाइन : विजयलक्ष्मी (दिल्ली), शांतनव (हैदराबाद) संपादकीय संपर्क : aifrtenewsletters@gmail.com एक अरसे बाद ताकील फिर से आपके दरपेश है। जब लूट और नफ़रत की सियासत के दीमक समाज की नींव के हर कोने पर पैठ बना चुके हों, तालीम पर बात की अहमियत और ज्यादा हो जाती है। महामारी के दौरान समाज में मौजूद वर्ग-जेंडर-समुदायों आदि के बीच मौजूद खाइयाँ और गहरी हुई। मुनाफाखोर और सियासी लुटेरे इस दौरान बेरहमी के साथ अपनी ताकत बढ़ाते रहे। इस मक़सद से नई नीतियाँ बनाई गई, पाठ्यक्रम से महत्वपूर्ण हिस्से हटाए गए। फिरकापरस्ती को और बढ़ावा मिला, नतीजतन चारों ओर हिंसा और नफ़रत का माहौल बढ़ता चला है। इस अंक में नई राष्ट्रीय शिक्षा नीति पर आलोचनात्मक लेखों के साथ मणिपुर में हिंसा और देश के बाक़ी हिस्सों में बढ़ते जा रहे लूट-मार के माहौल पर संजीदा लेख शामिल हैं। साथ ही अभाशिअमं के सदस्य संगठनों की हाल की गतिविधियों का संक्षिप्त ब्यौरा है।



(www.blog.ipleaders.in/intolerantly-tolerant-india-new-identity/)

जाहिर है कि देश भर में फिरकापरस्ती के खिलाफ लोग मुखर हैं। आज सांप्रदायिक ताकतों द्वारा तेजी से संवैधानिक मूल्यों पर चोट पहुँचाई जा रही है। आगे संविधान की आत्मा को खत्म करने की क़वायद दिखने लगी है। ऐसे में बराबरी के आधार पर तालीम के लिए संघर्ष के बुनियादी सरोकारों का कुचला जाना साफ है। इसलिए यह ज़रूरी हो जाता है कि मौजूदा हुकूमत और इनकी सियासत पर अभाशिअमं हल्ला बोले और इन्हें सत्ता से हटाने की लोकतांत्रिक कोशिशों के साथ जुड़े। दस साल पहले यह बात बहस-तलब हो सकती थी, पर आज इस पर बहस की गुंजाइश नहीं दिखती है। इस अंक में शिवानी और मधु प्रसाद के लेख इस मुद्दे को रेखांकित करता है। नई शिक्षा नीति को लेकर संजीदगी से बहस की ज़रूरत है और इसे अजय गुडावर्थी और कुलदीप पुरी आगे बढ़ा रहे हैं। बाक़ी लेखों में भी वक्त की आवाज़ गूँजती सुनाई देगी।

इसी बीच कई प्रतिबद्ध सामाजिक कार्यकर्ता हमारे बीच नहीं रहे। अभाशिअमं के शुरुआती दौर में सक्रिय रहे साथी संजीव माथुर का जून के आखिरी दिनों में निधन हो गया। मंच उनके प्रति भावभीनी श्रद्धांजली प्रकट करता है।

हम सभी हमखयाल साथियों से गुजारिश करते हैं कि आप ताकील से जुड़ें और अगले अंकों के लिए सामग्री भेजें, ताकि हम वक्त पर अंक निकाल सकें। इस बार कई सदस्य संगठनों से रपटें नहीं आई हैं और इस वजह से लगातार सक्रियता के बावजूद उनकी सही छवि हम नहीं दिखला पा रहे हैं। उम्मीद है कि अगले अंकों में हमें पर्याप्त सामग्री मिलेगी।

[ा] हर लेख में व्यक्त विचार लेखक के अपने हैं और संपादक-मंडल का हर बात से सहमत होना ज़रूरी नहीं है।

शाखाओं को जगह देने के लिए स्कूलों की तबाही

मधु प्रसाद

राष्ट्रीय शिक्षा नीति के नाम पर लुका-छिपी का खेल खत्म हो गया है और इसके पीछे का एजेंडा अब साफ है। शुरुआत चार सौ पेज से अधिक सुब्रमण्यम सिमित की रिपोर्ट से हुई, जिसे केंद्र सरकार ने न तो स्वीकार किया और न ही जनता के लिए जारी किया। भारत सरकार ने अचानक अपना 68 पेज का दस्तावेज़ जारी कर दिया। तत्कालीन राज्य सभा सांसद सीताराम येचुरी द्वारा सार्वजनिक रूप से इस तथ्य को उजागर करने के बाद कि इसे आर एस एस दस्तावेज़ से शब्दशः लिया गया था, शिक्षा मंत्री जावड़ेकर ने तुरंत दस्तावेज़ को यह कहते हुए वापस ले लिया कि यह 'ग़लती से' जारी किया गया था! लगभग दो साल बाद कस्तूरीरंगन सिमित की रिपोर्ट सामने आई। हालाँकि, कोविड महामारी के दौरान संसद में पेश किए बिना या चयन सिमित को भेजे बिना कैबिनेट द्वारा राष्ट्रीय शिक्षा नीति (एन ई पी 2020) पारित कर दी गई। शिक्षा के समवर्ती सूची के मुद्दों में शामिल होने की वजह से शिक्षाविदों के बीच खुली बहस या राज्यों को खबर करने के संवैधानिक नियम को माने बगैर, एन ई पी 2020 को कार्यकारी फैसलों, और विश्वविद्यालय अनुदान आयोग (यू जी सी), केंद्रीय माध्यमिक शिक्षा बोर्ड (सी बी एस ई), राष्ट्रीय शिक्षक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद (एन सी ई आर टी), राष्ट्रीय परीक्षण एजेंसी (एन टी ए) समेत ऐसे ही दीगर केंद्रीय संस्थानों के माध्यम से अव्यवस्थित तरीके से लागू किया जाने लगा।

इस नीति, इसके कार्यान्वयन के तरीके और जैसे भी हो आगे बढ़ाने, की अनुचित जल्दबाजी पर कड़ी आलोचनात्मक आपत्तियाँ थीं। संस्थानों को धमकी दी गई थी कि अगर अगले शैक्षणिक सत्र तक इसे लागू नहीं किया गया तो केंद्रीय फंड रोक दिया जाएगा। स्कूल और उच्च शिक्षा दोनों स्तरों पर शिक्षकों को नीति के खिलाफ न बोलने के लिए डराया और धमकाया गया और यूनियनों की प्रतिक्रियाओं को दबाने की कोशिश की गई। लगातार विरोध के बावजूद, संस्थाओं में प्रशासन को नीति लागू करने के लिए जबरन मजबूर किया गया, भले ही इसके लिए आपातकालीन शक्तियों का उपयोग करना पड़े। बिना तैयारी, योजना या संसाधनों के शिक्षा प्रणाली के सभी स्तरों पर, संरचनात्मक, शैक्षणिक और पाठ्यक्रम के बदलाव लाकर अराजकता पैदा कर दी गई। पहले से ही, अध्यापकों की तादाद में 50% से 60% की कमी और भौतिक बुनियादी ढांचे की कमी से संकट में पड़ी प्रणाली को कगार पर धकेला जा रहा था। उपकरणों और कनेक्टिविटी की कमी के बावजूद ऑनलाइन और ऑफलाइन कार्यप्रणाली के मिले-जुले तरीकों के माध्यम से पढ़ाया जाना था। आंगनवाड़ी कार्यकर्ताओं को शुरुआती बचपन में देखभाल-और-तालीम (ई सी सी ई) की ज़िम्मेदारियाँ लेने के लिए ऑनलाइन 'प्रशिक्षण' प्राप्त करना था! देश भर में स्कूलों का विलय हो रहा था और कहीं उन्हें बंद किया जा रहा था, ताकि 'स्कूल समूह' 'संसाधन' 'साझा' कर सकें, जो कि असल में थे ही नहीं। नतीजतन ऐसे बच्चे स्कूल छोड़ रहे थे जो पड़ोस के स्कूलों से वंचित हो गए या 'जोड़ दिए गए' किये गये स्कूलों में ठूंस दिए जा रहे थे।

हालाँकि सीखने के बोझ को कम करने और 'रट्टा' मार कर सीखने के तरीकों से दूर होने की बहुत चर्चा हो रही है, अब कक्षा 3, 5 और 8 में अखिल भारतीय परीक्षा के साथ कक्षा 10 और 12 में बोर्ड परीक्षा भी होगी। पहला यह तय करेगा कि किसकी 'शिक्षा' 'संख्या-समझ और साक्षरता' पर रुकेगी, कौन 'व्यावसायिक प्रशिक्षण' पर जाए (इन दो श्रेणियों में लगभग 85 से 90 प्रतिशत बहुजन बच्चे शामिल होंगे), जबिक दूसरा यह तय करेगा कि कौन उच्चतर माध्यमिक पूरा करे। लेकिन उच्च शिक्षा



www.hindustantimes.com/india-news/kerala-planning-to-ban-rss-shakhas-in-temples-across-the-state/story-ZkucTMK8Gql8fgy1kqNXHM.html

प्राप्त करने के लिए 10% से कम 'कुलीन' छात्रों को भी एक केंद्रीकृत प्रवेश परीक्षा में बैठना होगा (वर्तमान में यह केवल केंद्रीय विश्वविद्यालयों के लिए अनिवार्य है, इसे पूरे देश में विस्तारित करने का प्रस्ताव है)। कोचिंग कक्षाएं तेजी से बढ़ रही हैं; इस बार दिल्ली विश्वविद्यालय में 97% प्रवेश सीबीएसई स्कूलों से हुए हैं और छात्राओं की संख्या में चिंताजनक रूप से गिरावट आई है।

शिक्षा प्रणाली को व्यवस्थित रूप से क्यों नष्ट किया जा रहा है और भारत के अधिकांश बच्चों की पहुंच से शिक्षा को दूर क्यों रखा जा रहा है? सभी के लिए अनिवार्य शिक्षा के सर्वव्यापीकरण की सुविधा के लिए इसमें सुधार क्यों नहीं किया जा रहा है? शिक्षा में मौजूदा संकट की इस बदतर स्थिति से सरकार को क्या हासिल होने की उम्मीद है? इसका उत्तर 'भारतीय ज्ञान प्रणाली' (Indian

Knowledge System या आई के एस) सिहत 'भारत का ज्ञान' (Knowledge of India या के आई) (जनवरी 2022) पर एन ई पी 2020 प्रेरित पोज़ीशन-परचे में निहित है। स्कूलों और उच्च शिक्षण संस्थानों में ऐसे पाठ्यक्रम शुरू करने और शिक्षकों को निर्देश देने के लिए प्रशिक्षण के कई 'दिशा-निर्देश' जारी किए गए हैं। प्राचीन रस्मों के लिए 'वैज्ञानिक' तर्क की खोज के लिए केंद्र द्वारा चयनित और अच्छी तरह से वित्त-पोषित अनुसंधान परियोजनाएं पहले से ही चल रही हैं। विज्ञान, गणित, खगोल विज्ञान ('ज्योतिष' सिहत), चिकित्सा-विज्ञान, सामाजिक संगठन और शासन, कला, सौंदर्यशास्त्र, वास्तुकला आदि ज्ञान के सभी क्षेत्रों में प्राचीन भारत में तथाकथित 'वैदिक' उपलब्धियों पर, और संस्कृत भाषा पर, जिसमें ये सुलभ हैं, ध्यान डाला गया है। पुराण, स्मृतियाँ, महाकाव्य, वेद और उपनिषद जैसे प्राचीन ग्रंथ इसके मुख्य स्रोत सामग्री हैं। गुरुकुलों और मंदिर-विद्यालयों को उन उचित संस्थानों के रूप में सम्मानित किया गया है जिनमें यह ज्ञान प्रसारित (मानो जातिगत बहिष्कार के बिना) और संरक्षित किया जाता था।

इस काल्पनिक तस्वीर को सही ऐतिहासिक 'आख्यान' के रूप में पहचाने गए ढांचे में रखा गया है, जो कि 'हमलावरों और उपनिवेशवादियों' की विचारधारा से दूषित नहीं है, ताकि आधुनिक विज्ञान, ज्ञानोदय और औद्योगिक क्रांति के उदय से पहले और बढ़कर भारतीयता को फिर से खोजा जा सके और आई के एस को अपनी सही जगह मिल सके। ऐतिहासिक आख्यान में "सभ्यता की रक्षा में दृढ़ता" दिखनी चाहिए। हमलावरों और उपनिवेशवादियों की उपलब्धियों को विस्तार से बताने के बजाय हिंदू राज्यों और राजवंशों की भूमिका पर जोर देना होगा। और इसलिए ऐतिहासिक साक्ष्यों का घोर उल्लंघन करते हुए बताया गया है कि "इन हमलों के जाहिर नतीजे" के रूप में "बौद्ध धर्म का पतन शुरू हो गया"!

दस्तावेज़ में दावा किया गया है कि "हजारों वर्षों तक" उपिनवेश रहने के कारण "हमारे बुद्धिजीवियों का एक समूह" स्पष्ट रूप से भ्रमित हो गया है, जो प्राचीन ग्रंथों (जैसे मनुस्मृति) की "ग़लत व्याख्या" कर प्राचीन सभ्यता को सामाजिक ग़लितयों के लिए "जिम्मेदार" बनाते हैं, जिससे "पारंपरिक" रोजगार के पैटर्न का नुकसान हुआ है। इसलिए हमें जातिगत विभाजन और उत्पीड़न को सामाजिक सद्भाव और स्थिरता के रूप में देखना चाहिए! सामाजिक संगठन के ब्राह्मणवादी सिद्धांतों और दैनिक

जीवन में जाति पदानुक्रम के वैचारिक प्रसार के इस खुले समर्थन को मूलभूत भारतीय धर्म के रूप में देखा गया है, जिसे नए ऐतिहासिक आख्यान द्वारा गौरवान्वित और मजबूत किया जाना है।

IKS/KI कुछ और नहीं, बल्कि पूरी शिक्षा-प्रणाली में RSS शाखाओं की विचारधारा को बढ़ावा देना है। यह पाठ्यक्रम में एक अनिवार्य परिशिष्ठ होगा जिसके लिए समय निश्चित होगा, हालांकि दूसरे विषयों के साथ इसकी जांच और ग्रेडिंग नहीं की जाएगी। हर स्कूल और शैक्षणिक संस्थान में आई के एस/के आई की शिक्षा और प्रदर्शनी, वाद-विवाद, सवालजवाब, आदि, और शारीरिक प्रशिक्षण और योग सिहत इसकी अन्य गतिविधियों को व्यवस्थित करने के लिए एक 'इकाई' होगी। हर स्कूल के पुस्तकालय में किताबों और अन्य सामग्री के साथ IKS/KI पर एक विशेष अनुभाग होगा।

बेशक मौजूदा औपनिवेशिक रूप से प्रेरित शिक्षा प्रणाली से ऐसी तालीम देने वाले शिक्षकों के आने की उम्मीद नहीं की जा सकती है। इसलिए उन्हें आरएसएस/संघ परिवार संगठनों, 'समुदाय' और 'परिवार' से लाना होगा, जो आई के एस विचारधारा के अनुकूल हैं। एनईपी 2020 की जरूरतों के प्रति उन्हें संवेदनशील बनाने के लिए बार-बार कार्यशालाएं आयोजित करनी पड़ेंगी।

यहां तक कि इस आधार पर शिक्षा को फिर से विकसित करने के विचार के लिए भी प्राचीन संस्कृत ग्रंथों के अच्छी तरह से शोध किए गए विवरण की ज़रुरत होगी। यह एक बहुत बड़ा बौद्धिक काम है और इसे शोधकर्ताओं, शिक्षकों और छात्रों पर 'बोझ' डाले बिना शायद ही हासिल किया जा सकता है! इसमें खास तौर पर समस्या आती है, क्योंकि ब्राह्मणवादी विचारधारा स्वयं लोकायत, चार्वाक-भौतिकवाद, और सांख्य-योग और नया वैशेषिक यथार्थवाद के साथ तीखे मुठभेड़ से ही आगे बढ़ी है। बौद्ध और जैन दर्शन के जाति-विरोधी और कर्मकांड-विरोधी सामाजिक संगठन स्पष्ट रूप से ब्राह्मणवाद विरोधी थे। प्राकृत और पाली साहित्य का समृद्ध समूह, ब्राह्मणवादी संस्कृत साहित्य से भिन्न और दूर, मान्यता प्राप्त परंपरा है।

इस तरह 'हमलावरों' के आने तक, भारत की प्राचीन सभ्यता के इतिहास को ऐसे निरंतर एकरूपता में पेश कर ब्राह्मणवाद का महिमामंडन करने की कोशिश अपने आप में एक भारी पक्षपाती और पूर्वाग्रह-पूर्ण वर्णन है, जो शिक्षा की आधुनिक आलोचनात्मक प्रणाली का आधार बनने के क़तई अनुकूल नहीं है।

एक ओर अपने रुख की विडंबना से अनजान, वास्तव में पोज़ीशन-परचा स्वयं कहता है कि भारतीयता को पुनः प्राप्त करने के लिए भारत में जोसेफ नीधम की ज़रूरत है, जिसने चीनी विज्ञान और प्रौद्योगिकी की सभ्यतागत उपलब्धियों का व्यापक अध्ययन किया है! पर उनके नक्शे-कदम पर चलने से दूर, IKS/KI विपरीत दिशा में आगे बढ़ रहा है।

शुरुआती सभ्यता के दार्शनिकों और विचारकों की वास्तविक उपलब्धियों पर गंभीर शोध के बगैर, जिसमें पूरी तरह से नज़रअंदाज़ किए गए मध्ययुगीन दार्शनिक एकेश्वरवादी सोच और प्राकृतों के प्रसार और विकास में उनके समाजशास्त्रीय और भाषाई प्रभाव का उल्लेख भी होना होगा, वैचारिक रूप से प्रेरित और अप्रमाणित ब्राह्मणवादी उपलब्धि के 'स्वर्ण युग' का 'शाखा प्रोपागंडा' बस यही है - प्रोपागंडा।

सरकार की ओर से गुणवत्तापूर्ण शिक्षा प्रदान करने की संवैधानिक प्रतिबद्धता को आसानी से दरिकनार कर, संसाधनों के बिना सार्वजनिक शिक्षा प्रणाली को पंगु कर भारत के अधिकांश बच्चों को इस शाखा-आधारित प्रोपागंडा का शिकार बनाया जाएगा। बेशक विशेषाधिकार प्राप्त अभिजात वर्ग के लिए विदेशों में या भारत में स्थित विदेशी परिसरों में तालीम पा कर मुनाफाखोरी और स्वदेश लौटने की बेरोक आज़ादी में बढ़त होती रहेगी।

'सबरंग' में प्रकाशित मूल अंग्रेज़ी लेख से गूगल और लाल्टू द्वारा अनुवाद
लेखक अभाशिअमं अध्यक्ष-मंडल की सदस्य और मंच की प्रवक्ता हैं

नई शिक्षा नीति (एन ई पी): छिपे मक़सद

अजय गुडावर्थी

राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 2020 एक फ़रेबी नीति-दस्तावेज है, जिसके छिपे मायनों को पढ़ने की जरूरत है। आर एस एस पहले ही दावा कर चुका है कि दस्तावेज़ में उनके प्रोग्राम का साठ फीसदी मौजूद है। नीति में शामिल भेदभाव के मक़सद का विरोध करने से आगे बढ़कर ज्ञान, शिक्षा और शिक्षा-शास्त्र के कुछ अहम मुद्दों पर भी ध्यान देने की आवश्यकता है, जिन्हें दस्तावेज़ स्वत: छूता है। एन ई पी की अधिकांश आलोचनाओं में विवादास्पद मुद्दों का आसान समाधान नहीं हो पाता है और इसलिए एन ई पी में नीतिगत सुझावों की आलोचना पेश करते समय शिक्षा पर बहस को नजरअंदाज नहीं किया जाना चाहिए।

पहली बात यह कि, दस्तावेज़ शिक्षा के दायरे को 'संज्ञानात्मक क्षमताओं, जैसे कि आलोचनात्मक सोच और सवाल हल करने की काबिलियत' से आगे बढ़कर- 'सामाजिक, नैतिक और जज़्बाती क्षमताओं और प्रवृत्तियों' तक बढ़ाने से शुरू होता है। इससे आधुनिक शिक्षा प्रणाली द्वारा प्रदान किए जाने वाले आवश्यक जीवन कौशल का बड़ा ज़रूरी सवाल सामने आता है। वर्तमान शिक्षा में मौजूद अधिकांश तकनीकी ज्ञान और कौशल हमें रोजमर्रा के सामाजिक, सांस्कृतिक, भावनात्मक और नैतिक मुद्दों के संदर्भ में सक्षम नहीं बनाते हैं जिनका हम सामना करते हैं। संज्ञानात्मक क्षमताओं को आदर्श मूल्यों संबंधी चिंताओं से अलग कर दिया गया है। दस्तावेज़ दोनों को जोड़ने के एक महत्वपूर्ण तरीके को छूता है। हालाँकि यह सवाल उठता है कि क्या नैतिकता राज्य की नीति के माध्यम से प्रदान की जा सकती है? क्या व्यक्तित्व निर्माण और भावनात्मक निर्माण पाठ्यक्रम का हिस्सा हो सकते हैं? राज्य-प्रेरित और नीति-उन्मुख नैतिक उपदेशों के सामाजिक परिणाम क्या हैं? क्या इससे अधिनायकवादी, एकरूप और बहुसंख्यकवादी निर्मितियाँ नहीं बनती हैं? हालाँकि दस्तावेज़ विविधता पर जोर देता है, लेकिन यह साफ है कि आर एस एस 'राष्ट्र-निर्माण' को 'चिरत्र-निर्माण' से जोड़ने के हिस्से के रूप में नैतिकता और मूल्यों की कैसी कल्पना करता है।

इस बात की पूरी संभावना है कि जाति-आधारित हिंदू सांस्कृतिक-नैतिक विश्व-दृष्टिकोण को पाठ्यक्रम का अहम हिस्सा बनाया जाएगा, जिसके लिए आर एस एस प्रतिबद्ध है, क्योंकि दस्तावेज़ में वेदों और उपनिषदों की बातें की गई हैं, लेकिन बौद्ध धर्म और चार्वाक पर नहीं। लेकिन इसका मतलब यह नहीं है कि मूल्यों, नैतिकता और भावनाओं पर कुछ चर्चा शामिल करने की ज़रुरत नहीं है। उन्हें महज निजी खासियत नहीं माना जा सकता, और संज्ञानात्मक क्षमताओं को सामूहिक और मानक ज्ञान का स्रोत माना जा रहा है। नैतिकता और जज़्बात पर ध्यान देने को ज्यादातर प्रगतिवादियों ने बहुसंख्यकवादी या रुढ़िवादी माना है, क्योंकि यह निजी आज़ाद-खयाली पर बाहरी दबाव लाता है। लेकिन सभी समाजों में ज्ञान का नैतिक और भावनात्मक आधार अहम है और उन्हें तालीम के दायरे से बाहर नहीं रखा जा सकता है। दार्शनिक मार्था नसबाउम का कहना है, 'रुसो की तरह असिहष्णु और तानाशाह हुए बिना, कोई सभ्य समाज स्थिरता और प्रोत्साहन के लिए लॉक और कांट की तुलना में और ज्यादा कुछ कैसे कर सकता है?

दस्तावेज़ का दूसरा प्रमुख नीतिगत सुझाव व्यावसायिक शिक्षा को पाठ्यक्रम का हिस्सा बनाने पर जोर देना है। इसमें कहा गया है कि सभी बच्चों के लिए व्यावसायिक कौशल और प्रशिक्षण, जैसे कि बढ़ईगीरी, शिल्प-कला और दीगर हुनर पाना अनिवार्य होगा, जिसमें सीखने के विभिन्न खित्तों में से नुकसानदेह ऊँच-नीच के ढाँचे और खाइयों को खत्म करने के लिए शारीरिक 'श्रम' शामिल है। मेरे खयाल में यह भी एक अहम मुद्दा है। हाथ से काम करने के कौशल के विचार को नीति में शामिल करना मानसिक और शारीरिक श्रम के बीच पूर्वाग्रहपूर्ण विरोध करने वाले समाज में संभावित रूप से क्रांतिकारी कदम हो सकता

है। वास्तव में, आधुनिक जाति व्यवस्था के लगातार बने रहने में रस्मी क़ायदों की तुलना में मानसिक-शारीरिक तरीकों की भूमिका ज्यादा है। कहा जा सकता है कि शारीरिक कौशल को शामिल करने से श्रम की गरिमा बढ़ेगी जो यूरोप से उलट भारत में गायब है।

हालाँकि, जब एन ई पी में पेश किए गए निकास के विभिन्न विकल्पों के साथ स्कूली शिक्षा में भी व्यावसायिक प्रशिक्षण के अनिवार्य प्रावधान को पढ़ा जाता है, तो ऐसी समझ की संभावना खुलती है कि कैसे आर एस एस का एजेंडा ऊँचनीच के भेदभाव को तोड़कर नहीं, बल्कि उन्हें मजबूत करके पूरा किया जा रहा है। इसमें कहा गया है, 'खास तौर पर दसवीं कक्षा के बाद बाहर निकल जाने पर छात्रों के पास व्यावसायिक या किसी और मौजूद पाठ्यक्रम में आगे बढ़ने के लिए फिर से अगले चरण में प्रवेश करने का विकल्प जारी रहेगा।' व्यावसायिक शिक्षा प्रदान करने और प्रमाण-पत्रों के साथ विभिन्न स्तरों पर बच्चों को स्कूली शिक्षा छोड़ने की अनुमित देने से केवल मौजूदा आगे बढ़ने के मौके और सामाजिक ऊँच-नीच के ढाँचे ही चलता रहेंगे। श्रम की गिरमा के बजाय यह जातिगत धंधों को मजबूत कर सकता है और एक पिरामिड जैसी सामाजिक संरचना बना सकता है जहां उच्च-शिक्षा केवल हिंदुओं में ताकतवर जातियों और आर्थिक रूप से संपन्न सामाजिक वर्गों के लिए बना रहेगा। यह आर एस एस की सामाजिक सोच का हिस्सा है जिसे वे समरसता के रूप में बखान करते हैं लेकिन इसमें जातियों को ऊँच-नीच रूप से संगठित करने के साथ वर्णाश्रम धर्म की सिदयों पुरानी व्यवस्था में लौटने का आग्रह है।

यह फिर से बड़े सवाल खड़े करता है। जबिक यह आम समझ है कि किसी भी सामाजिक समूह के लिए उच्च शिक्षा के मौक़े बंद नहीं होने चाहिए, लेकिन क्या इसका मतलब यह भी है कि हर कोई उच्च शिक्षा प्राप्त करेगा ही? समाज के उच्च स्तर पर रोजगार के कौन से रास्ते तैयार किये जा सकते हैं? यह ज्ञात है कि 1970 के दशक के बाद पूँजी जमा होने के पुराने तरीकों से हुए श्रम के विस्थापन की दर औद्योगीकरण और सेवा क्षेत्र के विस्तार के माध्यम से उपजी नौकरियों की तुलना में अधिक है। फिर हम सामाजिक ऊँच-नीच के ढाँचों को मजबूत किए बिना शिक्षा और रोजगार को फिर से कैसे जोड़ सकते हैं?

तीसरा अहम पहलू प्रेडेड ऑटोनोमी या स्वायत्तता में क्रम का है। डिग्री देने वाले कॉलेजों के लिए स्वायत्तता में क्रम का प्रावधान शामिल है। इसमें कहा गया है, 'इस नीति में निर्धारित उच्चतम गुणवत्ता की शिक्षा प्रदान करने वाले उच्च-शिक्षा संस्थानों (एचईआई) को उनकी क्षमता का विस्तार करने के लिए प्रोत्साहित किया जाएगा।' यहां भी, गुणवत्ता एक महत्वपूर्ण और बहुत जरूरी फोकस बनी हुई है। हालाँकि, गुणवत्ता और प्रोत्साहन के लिए अनुदान को जोड़ने के सुझाव के जिरए यह तर्क दिया जा सकता है कि स्वायत्तता प्रशासनिक नियंत्रण से मुक्ति की तुलना में माली-खुदमुख्तारी का पर्याय है। इसके अलावा, यदि गुणवत्ता और प्रदर्शन ही मानदंड हैं तो हम उन क्षेत्रीय/राज्य विश्वविद्यालयों और कॉलेजों की मदद कैसे कर सकते हैं जो खराब बुनियादी ढांचे की वजह से बदहाल हैं? क्या यह उन संस्थानों के खिलाफ और अधिक दंडात्मक कार्रवाई नहीं होगी, जो पहले से ही खराब गुणवत्ता वाली शिक्षा से बदहाल हैं, जिससे उच्च शिक्षा के केंद्रीकरण में बढ़त और सार्वजनिक वित्त पोषण में गिरावट आएगी? गुणवत्ता के नाम पर स्वायत्तता उच्च-शिक्षा के निजीकरण का संक्षिप्त रूप लगती है।

भारत में निजीकरण की आलोचना ने अक्सर गुणवत्ता और कार्य नैतिकता पर बड़ी अहम बहस को दरिकनार किया है। भारतीय संस्थानों को दोनों ही मोर्चों पर नुकसान उठाना पड़ता है। यह तथ्य है कि प्राथिमक सरकारी स्कूलों सिहत अधिकांश संस्थान न केवल बुनियादी ढांचे के कारण, बल्कि खराब कार्य-नीति और प्रतिबद्धता के अभाव के कारण भी खराब गुणवत्ता वाली शिक्षा प्रदान करते हैं। यहां तक कि निजी संस्थानों ने भी खराब गुणवत्ता वाली शिक्षा प्रदान करना जारी रखा है। हम गुणवत्ता में समान रूप से सुधार कैसे करें यह एक बहुत बड़ा सवाल है जिसे सार्वजनिक शिक्षा का समर्थन करने वालों द्वारा उठाया जाना

चाहिए। अक्सर ऐसे लोग इस सवाल को कि हम अध्यापकों को और अधिक पेशेवर कैसे बना सकते हैं, यह कह कर दरिकनार कर देते हैं कि ये भारत में उच्च शिक्षा के निजीकरण के बहाने हैं।

अंत में, यह दस्तावेज़ बहु-विषयक (मल्टी-डिसिप्लिनरी) और अंतः-विषय (इंटर-डिसिप्लिनरी) शिक्षा पर जोर देता है। इसमें कहा गया है, ' वक्त के साथ एकल-स्ट्रीम एच ई आई को चरणबद्ध तरीके से समाप्त कर दिया जाएगा, और इन्हें सभी खित्तों में ऊँची गुणवत्ता वाले बहु-विषयक और अंतर-विषयक पढ़ाई और अनुसंधान को सक्षम और प्रोत्साहित करने के लिए जीवंत बहु-विषयक एच ई आई समूहों (क्लस्टर) का हिस्सा बनने की दिशा में आगे बढ़ाया जाएगा। ' यह भी भारत में उच्च शिक्षा के लिए एक बड़ा ज़रुरी प्रयोग था। दुनिया भर में अधिकांश अग्रणी स्तर की तालीम और अनुसंधान बहु-विषयक दृष्टिकोण के माध्यम से हो रहे हैं। विभिन्न कारणों से ऐसे कई प्रयोग भारत में असफल रहे हैं।

यहां भी, वर्तमान शासन द्वारा डाले जा रहे जोर और अपने हालिया तजुरबों को देखते हुए, बहु-विषयकता मानविकी और सामाजिक विज्ञान को कमजोर करने और प्रकृति-विज्ञान को प्रोत्साहित करने की एक चाल दिखती है। फिर से, यह वैचारिक वजहों से है कि आर एस एस मानता है कि भारत में सामाजिक विज्ञान उसके ढांचे के अनुरूप नहीं है और विज्ञान की सामाजिक संरचना उच्च शिक्षा संस्थानों में इसकी मौजूदगी को बेहतर बनाती है। जे एन यू जैसे संस्थानों में, हाल ही में विज्ञान, इंजीनियरिंग और प्रबंधन की तालीम के केंद्र सामाजिक विज्ञान के केंद्रों के लिए अनुदानों को कम करने और उन्हें हाशिए पर रखने के तरीके के रूप में शुरू किए गए थे। हालाँकि, इससे हमें बहु-विषयकता में प्रयोग जारी रखने के अन्य संभावित तरीकों पर बहस करने से नहीं रुकना चाहिए।

- 'द वायर' में प्रकाशित मूल अंग्रेज़ी से अनुवाद: लाल्टू - लेखक जेएनयू में प्रोफेसर हैं

शिक्षा में टेक्नोलोजी का हस्तक्षेप

कुलदीप पुरी

कोविड-2019 महामारी ने दुनिया भर में शिक्षा प्रक्रिया में गंभीर व्यवधान पैदा किया है। स्कूल, कॉलेज और विश्वविद्यालय कई महीनों तक बंद रखने पड़े। छात्रों की पढ़ाई का काफी नुकसान हुआ। उस समय शिक्षा में आ रही बाधा को तोड़ने के लिए विद्यार्थियों के लिए घर बैठे ऑनलाइन माध्यम से शिक्षा की व्यवस्था करने का प्रयास किया गया। महामारी के कठिन समय में डिजिटल तकनीक पर पूर्ण निर्भरता के अलावा कोई और प्रभावी विकल्प नहीं था। इस प्रकार की शिक्षा की दो मुख्य सीमाओं उजागर हुईं। पहली तो यह कि ऐसी शिक्षा सभी के लिए सुलभ नहीं हो सकती। यह उन छात्रों तक ही सीमित था जिनके पास कंप्यूटर या स्मार्ट फोन के साथ-साथ इंटरनेट तक की पहुंच थी और ऐसे छात्रों की संख्या बहुत कम थी। दूसरी, यह बिल्कुल भी

विश्वास के साथ नहीं कहा जा सकता कि इससे बेहतर शिक्षा मुहैया हो पाएगी। अर्थशास्त्र के माहिर जाँ द्रेज़ द्वारा अगस्त 2021 में 15 राज्यों और केंद्र शासित प्रदेशों में किया गया अध्ययन 'लॉक्ड आउट: इमरजेंसी रिपोर्ट ऑन स्कूल एजुकेशन' उपरोक्त तथ्यों की पृष्टि करता है।

शिक्षा के क्षेत्र में क्रांति लाने का दावा करने वाली भारत सरकार द्वारा महामारी के साये में जारी की गई नई शिक्षा नीति-2020 शिक्षा में टेक्नोलोजी के बड़े हस्तक्षेप की वकालत करती है। नीति के कथन के अनुसार, भारतीय शिक्षा प्रणाली इंटरनेट के आगमन के साथ टेक्नोलोजी के क्षेत्र में तेजी से हो रहे बदलावों के साथ तालमेल नहीं बिठा पाई है। इस कमजोरी ने तीव्र प्रतिस्पर्धी दुनिया में व्यक्ति और राष्ट्रीय-स्तर पर हमारा नुकसान में किया है।नीति की नजर में इस संकट की स्थिति से उभरने का प्रभावी तरीका लगातार विकसित हो रही डिजिटल तकनीक को शिक्षा प्रक्रिया के साथ जोड़ते रहना है। इसी क्रम में पढ़ने-पढ़ाने की प्रक्रिया में आधुनिक टेक्नोलोजी को पूरी तरह अपनाने के समर्थक केंद्रीय शिक्षा मंत्रालय के महत्वपूर्ण नुमाइंदों ने लिखा है कि महामारी ने शिक्षा के क्षेत्र और भविष्य को बड़ा झटका दिया है। इतनी जल्दी हमारे सामने भविष्य आ खड़ा हुआ, जिसकी हमने कल्पना तक न की थी। यदि महामारी न होती तो शिक्षा में डिजिटल तकनीकों का इतना उपयोग न होता। हमारे कई शिक्षक डिजिटल प्रौद्योगिकियों का उपयोग करने से पहले ही सेवानिवृत्त हो गए होंगे। शिक्षार्थी अपनी भाषा या शिक्षा के विभिन्न डिजिटल रूपों में बड़ी मात्रा में विविध नई सामग्री से वंचित रह जाते (अनीता करवाल, रजनीश कुमार, द हिंदू, 16 सितंबर 2021)।

यूनेस्को की 2023 वैश्विक शिक्षा निगरानी रिपोर्ट में उठाए गए कुछ मुद्दों के आलोक में शिक्षा में टेक्नोलोजी के हस्तक्षेप के प्रति इस तरह के अति-उत्साह की जांच की जानी चाहिए। मूल सवाल शिक्षा पर टेक्नोलोजी अपनाने के प्रभाव के संबंध में ठोस और निर्विवाद सबूतों की कमी का है। इसके सकारात्मक प्रभावों के अधिकांश प्रमाण सबसे अमीर देशों से मिलते हैं। इनमें से अधिकांश सबूत टेक्नोलोजी उपकरण बेचने वाली पार्टियों द्वारा किए गए शोध पर आधारित हैं। बाजार व्यवस्था से प्राप्त इन साक्ष्यों की विश्वसनीयता पर सवाल उठना स्वाभाविक है। इसके अलावा, शैक्षिक टेक्नोलोजी उपकरण औसतन हर तीन साल में बदल दिए जाते हैं। शिक्षा पर ऐसे तेजी से बदलते उपकरणों के प्रभाव का मूल्यांकन करना लगभग असंभव हो जाता है। ऐसा लगता है कि शिक्षा में टेक्नोलोजी के उपयोग के बारे में निर्णय शिक्षा के किसी क्षेत्र के लिए इसकी उपयोगिता के बजाय टेक्नोलोजी की उपलब्धता पर आधारित है। इससे कभी-कभी उपयोग में आने वाली तकनीक शिक्षा में सहायता के बजाय बाधा बन जाती है। शिक्षा का मूल उद्देश्य गौण रह जाता है।

यह दावा किया जाता है कि टेक्नोलोजी यह सुनिश्चित करने में सहायक है कि शिक्षा सभी के लिए आसानी से उपलब्ध हो। यह सच है कि महामारी के दौरान ऑनलाइन माध्यमों से दी गई शिक्षा से स्कूल बंद होने पर शिक्षा में हुए नुकसान की कुछ भरपाई करने में मदद मिली। यह भी पता चला है कि खुली और दूरस्थ शिक्षा पद्धितयों के माध्यम से दुनिया भर में एक अरब से अधिक छात्रों तक पहुंचने की क्षमता थी। लेकिन आंकड़े यह भी बताते हैं कि दुनिया के लगभग एक तिहाई छात्र इस सुविधा से वंचित हैं। इन ड्रॉपआउट छात्रों में से 72 प्रतिशत अत्यंत गरीब वर्ग के थे। ऐसा संभवतः उनके पास उपकरणों की कमी और इंटरनेट से जुड़ने में तकनीकी और आर्थिक बाधाओं के कारण हुआ होगा। जब ज़रूरी सामग्री और इंटरनेट तक पहुंच दुर्लभ हो जाती है तो शिक्षा का अधिकार भी असमानता का शिकार हो जाता है। सभी के लिए शिक्षा तक आसान पहुंच सुनिश्चित करने के दावे की ताकत भी कमज़ोर पड गई है।

टेक्नोलोजी प्रत्येक छात्र को निजी स्तर पर शिक्षा प्राप्त करने में सक्षम बनाने का वादा करती है। एक अकेला बच्चा हर दिन किसी स्कूल या कॉलेज गए बिना अपने डिजिटल-डिवाइस की मदद से सीखने का अपना रास्ता तय कर सकता है। यह समझ शिक्षा की मूल अवधारणा के विपरीत है। शिक्षा प्रक्रिया के सामाजिक आयाम भी हैं। छात्रों को एकांत के साथ-साथ जीवंत स्कूल और कॉलेज, साथी छात्रों के साथ घुल-मिलकर मुद्दों को सीखने और समझने के अवसर, शिक्षकों के साथ संवाद, खुले खेल के मैदान, अच्छे पुस्तकालय और आधुनिक प्रयोगशालाएँ प्रदान की जानी चाहिए। शिक्षा की इन बुनियादी ज़रुरतों का कोई बेहतर विकल्प संभव नहीं हो सकता। टेक्नोलोजी के इतने बड़े पैमाने पर आमद से पहले ही, दुनिया के विकसित देशों ने अपने बच्चों के लिए बेहतर मेयार की स्कूली शिक्षा पहले ही उपलब्ध करा दी थी।

यह ज़रुरी नहीं है कि अपने कमरे में या शिक्षक तथा संस्थान से दूर एक कोने में मशीन के सामने बैठने वाले छात्र के सीखने का स्तर अच्छा होगा। उदाहरण के लिए, संयुक्त राज्य अमेरिका में 20 लाख छात्रों के विश्लेषण से पता चला कि जिन छात्रों को केवल दूरस्थ शिक्षा निर्देश दिए गए थे, उनमें सीखने के स्तर की खाई गहरी था। प्रोग्राम फॉर इंटरनेशनल स्टूडेंट परफॉमेंस (पीआईएसए) के एक अध्ययन से पता चला है कि सूचना और संचार टेक्नोलोजी के अंधाधुंध उपयोग या अनुचित टेक्नोलोजी के उपयोग का परीक्षाओं में छात्रों के प्रदर्शन पर नकारात्मक संबंध है। दुनिया के चौदह देशों में किए गए शोध के अनुसार, छात्रों की मोबाइल फोन से निकटता उनका पढ़ाई से ध्यान भटकाती है और उनकी सीखने की प्रक्रिया पर बुरा असर डालती है। दुनिया के लगभग एक चौथाई देशों ने स्कूलों में स्मार्ट फोन के इस्तेमाल पर रोक लगा दी है।

शिक्षा में टेक्नोलोजी के वर्चस्व ने विषयों की गहराई में जाकर ठोस जांच करने के मायने ही बदल दिये हैं। आम तौर पर, अत्याधुनिक तकनीक छात्रों को विभिन्न विषयों के बुनियादी सवालों-जवाबों में महारत हासिल करने, घर पर शिक्षक द्वारा सौंपे गए काम को अपलोड करने और बदले में शिक्षक से फीडबैक प्राप्त करने तक ही सीमित है। छात्रों में आज़ाद-खयाली और आलोचनात्मक सोच विकसित करने में इसकी भूमिका नहीं के बराबर है। यूनेस्को की एक रिपोर्ट में कहा गया है कि कई देशों में टेक्नोलोजी को अपनाने के साथ-साथ डेटा की सुरक्षा के प्रावधानों के अभाव ने छात्रों और शिक्षकों की गोपनीयता को खतरे में डाल दिया है। यह पूरी स्थिति लोकतंत्र और मानवाधिकारों के लिए समस्याएँ खड़ी कर सकती है।

इस सारी घटना में व्यावसायिक और निजी संस्थानों के हित हावी हो रहे हैं। शिक्षा नीति 2020 में निजी संस्थानों को शिक्षा क्षेत्र में निवेश करने के निमंत्रण ने शिक्षा को पहले से कहीं अधिक तेजी से व्यवसाय के दायरे में खींच लिया है। जनता को गुणवत्तापूर्ण शिक्षा प्रदान करने का लक्ष्य और शिक्षा में व्यावसायिक हितों की खोज विपरीत दिशाओं में चलती है। ऐसे में निम्न और मध्यम आय वाले देशों के लिए यह बेहतर शिक्षा नीति होगी कि वे टेक्नोलोजी पर अधिक पूंजी निवेश करने के बजाय शैक्षणिक संस्थानों में बुनियादी ढांचा जुटाने पर ध्यान केंद्रित करें। टेक्नोलोजी शिक्षा की प्रक्रिया में एक महत्वपूर्ण उपकरण है, न कि उसकी मंजिल।

– मूल पंजाबी से गूगल द्वारा अनूदित

- लेखक पंजाब विश्वविद्यालय से रिटायर हुए प्रोफेसर और जाने-माने शिक्षाविद् हैं

मणिपुर: अंदरुनी जंग

मधु प्रसाद

जब मणिपुर राज्य की सरकार को उच्च न्यायालय ने निर्देश दिया कि वह राज्य की घाटियों में रह रहे बहुसंख्यक मैतेई समुदाय को अनुसूचित जनजाति (एसटी) का दर्जा देने पर हफ्तों में विचार करे, तो इस आदेश के खिलाफ 3 मई, 2023 को पहाड़ी जिलों की कुकी-ज़ो जनजातियों द्वारा एक विरोध जुलूस निकाला गया। प्रदर्शन के दौरान हिंसा की घटनाएँ हुईं। तब से लगभग 200 लोग मारे गए या लापता हैं, सैकड़ों घर जला दिए गए और हजारों कुकी और मैतेई लोग अपने गांव छोड़कर जल्दबाजी में बनाए गए राहत शिविरों में रहने के लिए मजबूर हो गए हैं। भले ही केंद्रीय रिजर्व और अर्धसैनिक बलों के हजारों सिपाही राज्य में मौजूद हैं, राज्य के शस्त्रागारों से बंदूकें और गोला-बारूद लूट कर सशस्त्र नागरिकों भारी गोलाबारी कर रहे हैं और राष्ट्रीय राजमार्गों पर स्थापित बंकरों और गांवों के प्रवेश-राहों पर स्वयंसेवक मोर्चाबंदी किए हुए हैं। हजारों की संख्या में मैतेई लोगों ने पड़ोसी मिजोरम से भागना शुरू कर दिया है, जहां उन्हें कुकियों के खिलाफ हमलावर के रूप में पहचाने जाने का खतरा महसूस हो रहा है।

भूमि अधिकार के मुद्दे, (कुकी, नागा और अन्य एस टी पहाड़ी जिलों में रहते हैं जो मणिपुर के भौगोलिक क्षेत्र के लगभग 90% हिस्सा हैं, जबिक 53% बहुसंख्यक मैतेई समुदाय घाटी पर हावी हैं), पहाड़ियों में पोस्ता की खेती और नशा-जितत आतंकवाद के आरोप, गृहयुद्ध की तरह भड़क उठे हैं, जिससे बड़े पैमाने पर एक ओर ईसाई कुकी समुदाय और दूसरी तरफ मुख्य रूप से हिंदू और कुछ मुसलमानों वाले मैतेई समुदाय बँट गए हैं। सैकड़ों गिरजाओं, मंदिरों, दुकानों और सार्वजिनक भवनों में तोड़फोड़ और आगजनी जारी है और वाहन जला दिए गए हैं। हैरतनाक ढंग से एक कुकी विधायक को पीट-पीटकर लगभग मार डाला गया और दो विधायकों के घर जमींदोज कर दिए गए।

जहां एक ओर राज्य-सत्ता हिंसा को नियंत्रित करने या अपने नागरिकों की रक्षा करने में नकामयाब साबित हुई है, और पुलिस या तो "असहाय" होने का दावा करती है या उन पर पीड़ितों द्वारा खुले तौर पर बहुसंख्यक समुदाय की भीड़ के साथ मिली-भगत का आरोप लगाया जाता है, जहां न तो जान और न ही संपत्ति सुरक्षित हैं, और कुकी मांग कर रहे हैं कि पहाड़ी जिलों में अलग प्रशासन का इंतज़ाम हो, ऐसे में राज्य सरकार का दावा है कि "हालात सामान्य" हैं, केंद्रीय गृह मंत्री नियमित बयान करते हैं कि पांच, दस या पंद्रह दिनों तक कोई भी नहीं मारा गया है और इसी बीच अगले दौर की हिंसा भड़क उठती है।

वे हमारी जानकारी का एकमात्र स्नोत थे, क्योंकि इंटरनेट पर दो महीने के लिए प्रतिबंध लगा दिया गया था, और मीडिया का ध्यान ज्यादातर प्रधान मंत्री की विदेश यात्राओं की उपलब्धियों पर केंद्रित था। मणिपुर पर पी एम बिल्कुल चुप रहे। केवल अब, जब गुस्साए स्थानीय लोगों ने पूछा कि वह कहां हैं, और विपक्षी राजनेताओं ने राज्य का दौरा करके राहत देने में उनकी नाकामयाबी पर सवाल उठाया, मणिपुर में अक्षम भाजपा सरकार को बर्खास्त करने और अराजकता को नियंत्रित करने के लिए राष्ट्रपति शासन लगाने की माँग की, तो बयान दिए जा रहे हैं वह वास्तव में पेरिस, संयुक्त राज्य अमेरिका या किसी अन्य विदेशी मुल्क से हालात की "ध्यान से निगरानी" कर रहे थे।

4 मई की बर्बरता के ढाई महीने से भी बाद सामने आया एक वीडियो वायरल हो गया, जिससे पूरे देश और वाक़ई दुनिया भर में अभूतपूर्व शर्म और आक्रोश फैल गया। इसने केंद्र और मणिपुर में "डबल इंजन" सरकारों द्वारा प्रचारित की जा रही 'सामान्य हालात' की पोल खोल दी। इससे यह उजागर हो गया कि वे मानवीय शालीनता और मानवीय गरिमा की बुनियादी फ़िक्र से भी बहुत पीछे हैं।

दो कुकी महिलाओं को पुलिस सुरक्षा में मैतेई पुरुषों की एक हजार की भीड़ को सौंप दिया गया। उन्हें नंगा किया गया, उनसे बेरहमी और सार्वजनिक रूप से छेड़छाड़ की गई, शहर में घुमाया गया और फिर सामूहिक बलात्कार किया गया। केवल चौदह दिन बाद एक ज़ीरो एफ़ आई आर दर्ज की गई और जुलाई के मध्य में वायरल वीडियो पर आक्रोश फैलने तक इस पर कोई कार्रवाई नहीं की गई।

मणिपुर के मुख्यमंत्री बीरेन सिंह अपने बचाव में बेशमीं से महज यह बात रखी कि "ऐसे वाक़िए" होते रहते हैं, इसलिए संभवतः उनसे उन सभी पर अमल करने की उम्मीद नहीं की जा सकती है। और पी एम मोदी ने संसद की सीढ़ियों पर खड़े होकर यह कहकर देश को चौंका दिया कि महिलाओं पर हमले अस्वीकार्य हैं, चाहे वे "राजस्थान, छत्तीसगढ़ या मणिपुर" में हों! यह उस प्रधानमंत्री की ओर से आने वाला एक भयावह बयान है, जिसने अभी तक हमारी पुरस्कार विजेता स्त्री- पहलवानों द्वारा हाल तक भारतीय कुश्ती महासंघ के प्रमुख रह चुके भाजपा सांसद के खिलाफ लगाए गए यौन-उत्पीड़न के खास आरोपों पर बात नहीं की है।

राज्य में तीन महीने की हिंसा और अराजकता के बाद मणिपुर पर मोदी का यह अकेला बयान था और वह अभी भी इस मुद्दे पर संसद के माध्यम से राष्ट्र को संबोधित करने से इनकार कर रहे हैं। हालाँकि, भाजपा की ट्रोल सेना, उसके नेताओं, सांसदों और विधायकों के लिए, यह एक ठोस और साफ संदेशा था। तब से इस मुद्दे पर पहले दबी-जुबान रही भाजपा ब्रिगेड अब विपक्षी दलों द्वारा शासित राज्यों पर अपने हमले में मुखर है, जहां यौन-उत्पीड़न के मामले हुए हैं।

भारत में सभी राज्यों और समुदायों में पितृसत्ता की धौंस को देखते हुए, 4 मई की भयावह घटनाओं को कोई मणिपुर में व्याप्त अशांत परिस्थितियों के संदर्भ में उभरी गंभीर लैंगिक हिंसा के मामले के रूप में देख सकता है। हालाँकि, तथ्य ऐसे नतीजे को झुठलाते प्रतीत होते हैं और संकेत देते हैं कि बात इतनी सरल नहीं है। सबसे पहले तो, महिलाएं, हमले की चपेट में आए अपने गांव से भाग निकली थीं। दूसरे, पुलिस ने उन्हें छिपते हुए पाया था और कहा था कि वे उन्हें सुरक्षित स्थान पर ले जायेंगे। आख़िरकार पुलिस उन्हें इलाके में खुले-आम घूम रही भीड़ के पास ले गई और उनके हवाले कर दिया। फिर वे गायब हो गए और उन्हें भीड़ की दया पर छोड़ दिया। यह केवल अक्षमता को नहीं दर्शाता है, बल्कि मिली-भगत का मामला दिखता है; मिलीभगत जो यह संकेत देती है कि पुलिस और भीड़ दोनों को जुर्म करते हुए किसी तरह का डर नहीं था। यह नतीजा इस तथ्य से और मजबूत होता है कि वीडियो सामने आने और वायरल होने तक हफ्तों तक जीरो एफ आई आर पर कोई कारवाई नहीं की गई।

हालाँकि मणिपुर में केंद्रीय बलों के एक लाख सिपाही भेजे गए हैं, इन हालात में सुप्रीम कोर्ट ने राज्य में पूर्ण अराजकता और संवैधानिक तंत्र के टूटने पर हैरानी दिखलाई, जबिक बीरेन सिंह सरकार और केंद्र सरकार ने इन परिस्थितियों में घटनाओं को 'सामान्य' बताने की कोशिश की।

मुख्य न्यायाधीश ने कहा कि मणिपुर में राज्य में व्याप्त "सांप्रदायिक और गुटबाजी के फसादों" की पृष्ठभूमि में स्त्रियों के खिलाफ "व्यवस्था-गत" और "अभूतपूर्व भयावह" यौन हिंसा हो रही है। मणिपुर का दौरा करने वाले सामाजिक कार्यकर्ताओं और विपक्ष के राजनीतिक नेताओं ने राज्य की तुलना 'संघर्ष क्षेत्र' और यहां तक कि 'गृहयुद्ध' की स्थिति तक करार दी है। मणिपुर संकट की विशालता और इसकी स्त्रियों की पीड़ा की पूरी भयावहता को जातीय और धार्मिक समुदायों के बीच इस तीव्र टकराव

के संदर्भ में समझना होगा, जहां राज्य सरकार खुद ही एक पक्ष के साथ खड़ी दिख रही है, और केंद्र सरकार और प्रधान मंत्री लोगों के साथ खड़े होने या यहां तक कि स्थिति को शांत करने के लिए कदम उठाने से इनकार कर रहे हैं।

बदिकस्मती से हमें पिछले कुछ वर्षों में देश में ऐसे हालात का तजुरबा रहा है। 2002 में गुजरात में नरसंहार राज्य के



www.thecsrjournal.in/opinion-who-is-responsible-for-manipurspresent-condition-manipur-violence-government-pmmodi-hindi/

समर्थन के बिना अकल्पनीय था। बिलिकस बानो, गुलबर्ग सोसाइटी और बेस्ट बेकरी मामले इन हालात को उजागर करने वाले मुठभेड़ थे, और दो हजार से अधिक मामलों को गुजरात राज्य से बाहर महाराष्ट्र में स्थानांतरित करना पड़ा तािक इंसाफ की कुछ उम्मीद की गारंटी दी जा सके। बिलिकस बानो मामले में स्त्रियों, बच्चों और पुरुषों के बलात्कार और हत्या के लिए दोषी ठहराए गए ग्यारह लोगों की गुजरात सत्र अदालत द्वारा हाल ही में रिहाई हुई और सत्तारुढ़ भाजपा के सदस्यों द्वारा इन अपराधियों को हैरतअंगेज़ ढंग से माला पहना कर और उन्हें 'संस्कारी ब्राह्मण' कह कर ' न्याय व्यवस्था का मज़ाक उड़ाया गया। अभी भी राज्य और केंद्र सरकार के पूर्ण समर्थन के साथ, जिंकया जाफरी, जिनके पित का भीड़ ने गुलबर्ग सोसाइटी में 96 लोगों की हत्या करने

और घरों को जलाने के बाद सर कलम कर दिया था, और कार्यकर्ता तीस्ता सीतलवाड को परेशान किया जाना जारी है।

इससे भी अधिक खतरनाक बात तेजी से पूरे देश में फैल रही मॉब लिंचिंग की प्रवृत्ति है। धर्मांतरण, अंतर-जातीय विवाह, 'लव जिहाद' और गोकुशी जैसे 'जुर्मों' के लिए अल्पसंख्यकों और दिलतों को 'तत्काल सजा' देने के लिए, बेख़ौफ़ दिक्षणपंथी संगठनों द्वारा लोगों की भीड़ इकट्ठी की जाती है, जो आम तौर पर वैचारिक रूप से संघ परिवार से (या कभी-कभी अन्य कट्टरपंथी समूहों) जुड़े या उनके सदस्य होते हैं। उन्हें इकट्ठा होने से और न केवल तलवारों और लाठियों से बल्कि आग्नेयास्त्रों से लैस होने से रोकने के लिए अधिकारियों द्वारा बहुत कम प्रयास किए गए हैं, जैसा कि हरियाणा में मेवात के नूंह जिले में सांप्रदायिक टकराव में देखा गया। वे 'दूसरों (अलहदा)' की पहचान लाद कर उन के साथ उनके घरों में, सड़कों पर, खेतों में, ट्रेनों में और वास्तव में सभी सार्वजनिक स्थानों पर बलात्कार, अत्याचार और हत्याएँ करते हैं। पुलिस उनके खिलाफ कोई कार्रवाई नहीं करती है, जनता या तो हस्तक्षेप करने में विफल रहती है या दरअसल कुछ वर्ग वास्तव में उनका समर्थन करते हैं और उनकी विचारधारा को साझा करने वाले राजनीतिक दल न केवल उनकी सराहना करते हैं, बल्कि मौजूदा हुकूमत की तरह सत्ता में होने पर उनके कारनामों का बचाव करते हैं और उन्हें बरी कर देते हैं।

यह कानून और न्याय की व्यवस्था और लोगों के माक़ूल हक़ों के किसी भी खयाल की धज्जियाँ उड़ाने से कम नहीं है। किसी विचारधारा, धर्म, जाति, नस्ल को ताकत दी जाती है और हौसला-आफजाई कर या धौंस दिखाने की इस कदर इज़ाज़त दी जाती है कि उसके कदम किसी भी कानून से परे दिखते हैं, और वह बेरहमी से अपनी इच्छा 'दूसरों' पर थोपता है।



 $\underline{www.telegraphindia.com/north-east/three-tribals-belonging-to-kuki-zo-community-shot-dead-in-manipur/cid/1965614}$

ऐसे हालात में, हमें न केवल लिंग, जाति, जातीय, धार्मिक और अन्य प्रकार के भेदभाव और उत्पीड़न के खिलाफ सुरक्षा प्रदान करने के उद्देश्य से बने कानूनों के खास उल्लंघन का सामना करना पड़ रहा है, बल्कि किसी की भी 'सभ्य' समाज की खासियत माने जाने वाली शासन की सधी हुई संरचना के चरमराने का भी सामना करना पड़ रहा है। जब लोगों के हक़ बहुत सीमित या असमान हों, जैसा कि गुलाम या जाति विभाजित समाजों और जड़ें जमा चुकी लैंगिक-दमनकारी संस्कृतियों के मामले में होता है, तब भी हर निज़ाम का एक सधा ढाँचा होता है, जो लोगों की 'अपेक्षाएँ' और

जुल्म के हालात की मुख़ालफ़त में उनके 'वजूद' का इस्तेमाल तय करती है।

हालाँकि, जब शासन के ऐसे मानदंड टूटते हैं - जैसे आधुनिक समय में फासीवादी पहचान वाली हुकूमतों में दिखती टूटन है - तो कोई भी अपने बचाव के लिए समाज की राजनीतिक, कानूनी और यहाँ तक कि नैतिक संस्थाओं पर भरोसे की उम्मीद से विरोध और प्रतिरोध के आम तरीकों का सहारा नहीं ले सकता। वास्तव में पतन ऐसी संस्थाओं को 'खोखला' कर देता है और अक्सर वे हमारा बचाव नहीं कर पाते, भले ही ऐसा लगे कि हम उनके साथ संगति नहीं रख पाए हैं।

तीन महीने से ज्यादा वक्त गुजर गया है और मणिपुर आज भी संकट की स्थिति में है। अभी कल ही (3 अगस्त) एक और शस्त्रागार लूट लिया गया है, जिससे नागरिकों के पास हथियारों और गोला-बारूद की ताजा आपूर्ति हो गई है। समस्याओं का हल खोजने में विफलता से आबादी में हताशा बढ़ रही है और दीगर उत्तर-पूर्वी राज्यों में बवाल फैलने का खतरा सामने है। मिजोरम पहले ही इसका असर झेल चुका है।

स्थिति की गंभीरता को पहचानना होगा। आजादी के बाद से इस तरह के फसादों से बचे रहे हिरयाणा के एक जिले में जारी सांप्रदायिक टकराव पर देश भर में प्रतिक्रिया परेशान करने वाली है, क्योंकि राज्य सरकार शुरुआती हमलावरों के रूप में अल्पसंख्यक समुदाय पर ध्यान केंद्रित कर रही है, लेकिन एक कथित 'धार्मिक' जुलूस में शामिल भारी हथियारों से लैस लोगों के उकसावे पर पर्याप्त रूप से ध्यान देने में विफल रही है। हाल ही में, ट्रेन में ड्यूटी पर तैनात एक सशस्त्र पुलिस कांस्टेबल द्वारा अपने विरष्ठ अधिकारी की गोली मारकर हत्या करने और तीन डिब्बों में जाकर तीन निर्दोष मुस्लिम यात्रियों की पहचान कर और खुलेआम फिरकापरस्त नारे लगाते हुए उन्हें गोली मारने की चौंकाने वाली घटना, इस तथ्य का प्रमाण है कि भारत रसातल के कगार पर है।

जाहिर तौर पर मणिपुर को बर्बाद होने दिया गया है क्योंकि कॉर्पोरेट्स पहाड़ी जिलों में दुर्लभ कीमती धातुओं का खनन चाहते हैं। वे तब तक वहां तक नहीं पहुंच सकते जब तक कुकी-ज़ो आदिवासी अकेले जमीन पर कब्जा किए हुए हैं। हरियाणा में आग लगाई गई है क्योंकि कुछ महीनों में चुनाव होने वाले हैं और वर्तमान हुकूमत के फायदे के लिए हाल में हुए किसानों के संघर्ष का असर खत्म करना है। एक हालिया अध्ययन से मिले ऑकड़ों में दिखता है कि सांप्रदायिक नफ़रत और दंगे एन डी ए के लिए वोट पक्के करते हैं। क्या ये स्वार्थी चालें देश को तबाह करने के लिए पर्याप्त वजहें हो सकती हैं? रोजगार, स्वास्थ्य और शिक्षा जैसे जनता के मुद्दों पर एकजुट हों! हमारे संवैधानिक मूल्यों और हक़ों को बचाए रखें!

जाति, पंथ, लिंग, जातीयता, भाषा, क्षेत्र और विकलांगता के आधार पर देश को विभाजित कर रही फासीवादी ताकतों को पछाड़ दें!

– मूल अंग्रेज़ी से गूगल द्वारा अनूदित

- लेखक अभाशिअमं अध्यक्ष-मंडल की सदस्य और मंच की प्रवक्ता हैं

शिक्षा का साम्प्रदायीकरण - शिक्षक के रूप में हम क्या करें?

शिवानी तनेजा

हमारी ज़िंदगी में दक्षिणपंथी राजनीति महज सैद्धांतिक बातचीत और भौतिक बदलावों, राम मंदिर की चाह और शहरों के नाम बदलने के रूप में ही नहीं, बल्कि हमारे आपसी रिश्तों पर भी हमला कर रही है। जैसे ही हम किसी अकादिमक क्षेत्र में प्रवेश करते हैं, हम देखते हैं कि यह कई तरीकों से बढ़ता चला है; यह विश्वविद्यालय की छात्र राजनीति के साफ दिखते झगड़ों के मैदान से बाहर जा चुका है, और स्कूली जीवन और बचपन में रोजाना घुसपैठ कर रहा है।

इस लेख में लेखक के ज़मीनी तजुरबों, बृहत्तर शोध और हाल की खबरों के आधार पर स्कूलों के सांप्रदायिकीकरण को दिखलाने की कोशिश है, और शिक्षकों के रूप में हमें जो भूमिका निभानी चाहिए, उसकी पड़ताल की गई है।

हिंदुत्व विचारधारा का प्रसार - आरएसएस वर्किंग ग्राउंड

आर एस एस से जुड़े स्कूल, जैसे विद्या भारती, एकल विद्यालय, सरस्वती शिशु मंदिर बड़ी पहुंच रखते हैं। उनकी वेबसाइट पर देखा जा सकता है कि उनका घोषित उद्देश्य हिंदुत्व को बढ़ावा देना है; इसका मतलब भारत में एकमात्र धर्म के रूप में हिंदू धर्म का महिमामंडन है। इस तरह यहां अपनाए गए पाठ्यक्रम का मुख्य उद्देश्य तथ्यों को बिगाड़ कर दिखलाने की कीमत पर भी अन्य धार्मिक समूहों के खिलाफ दुश्मनी पैदा करना है। उनके लिए, देशभिक्त का अर्थ संवैधानिक और प्रगतिशील मूल्यों में विश्वास के बजाय दूसरे धर्म के प्रति नफ़रत है। खुद लेखक को भोपाल के ऐसे एक स्कूल में पढ़ने वाले 8 साल के लड़के को यह कहते हुए सुनने का अनुभव है कि वह बड़ा होकर पश्चिम (यानी पाकिस्तान) के दुश्मनों को हराना चाहेगा। असम में एकल विद्यालयों और देश भर के विद्या भारती स्कूलों में इस्तेमाल की जा रही किताबों के विश्लेषण से पता चलता है कि पौराणिक कथाओं और इतिहास के बीच की सीमाएं धुंधली हो गई हैं, और इसका एक छिपा मक़सद यह है कि स्कूली रस्मों में धर्म और पारंपिरक प्रथाओं (जो कि लिंग-विषम भी हैं) को डाल दिया जाए।

जैसे-जैसे राज्यों के और राष्ट्रीय चुनाव नजदीक आ रहे हैं, हमें मध्य प्रदेश में 2004 के विधानसभा चुनावों में भाजपा की जीत के बारे में तत्कालीन मानव संसाधन विकास मंत्री मुरली मनोहर जोशी की टिप्पणी भी याद आ रही है, "वनवासी कल्याण मंच और फ्रेंड्स ऑफ ट्राइबल्स सोसायटी द्वारा आदिवासी क्षेत्रों में किया गया काम (जीत की) एक अहम वजह है, जिस पर बहुत कम लोगों ने ध्यान दिया है। (अरसे से) काम चल रहा था लेकिन अब यह परिपक्व हो गया है।" बीस साल बाद, यह पूरी तरह से जड़ें जमा चुका है। हम देखते हैं कि कई राज्यों के आदिवासी जिलों में आर एस एस समर्थित ये स्कूल आदिवासियों के 'हिंदूकरण' के एजेंडे को आगे बढ़ा रहे हैं। 2016 में, ऑपरेशन बेटी उठाओ ने असम और मणिपुर से आदिवासी लड़िकयों को हिंदू धर्म में दीक्षित करने के लिए गुजरात और पंजाब में तस्करी करने वाले एक मूक रैकेट का पर्दाफाश किया। आज के वक्त, जब हमारे सभी सार्वजनिक स्थानों पर ज़बरदस्त फिरकापरस्त माहौल व्याप्त हो गया है, बच्चों को ब्रेनवॉश करने के लिए अलग-थलग करना जरूरी नहीं रह गया। ये आसानी से हो जाता है।

आदिवासी कभी भी वर्ण व्यवस्था का हिस्सा नहीं थे और उन्हें दलितों के साथ-साथ 'अवर्ण' माना जाता था। लेकिन हिन्दुत्व समूह आदिवासियों की 'घर वापसी' पर काम कर रहे हैं। यह जीववादी धर्मों से हो सकता है क्योंकि कई लोगों ने संगठित धार्मिक संस्थानों से दूरी बना रखी है, पर साथ ही ईसाई धर्म से हिंदू धर्म में लाने की कोशिश भी है। यह स्कूलों में अपनाई गई शिक्षा प्रक्रिया के माध्यम से किया जाता है, जहां हिंदुत्व विचारधारा और विश्व दृष्टि को लागू किया जाता है।

पूंजीवादी और राजनीतिक दबदबा भी अपने विभिन्न उद्देश्यों के अनुरूप इस एजेंडे को आगे बढ़ा रहा है। किलंगा इंस्टीट्यूट ऑफ सोशल साइंसेज एक स्कूल है जो 30,000 आदिवासी छात्रों की संख्या का दावा करता है। इनकी संस्कृतिष्ठ संस्कृति में बच्चे अपने ही समुदाय की जड़ों से दूर हो जाते हैं। KISS ओडिशा राज्य के अन्य जिलों में भी स्कूल खोल रहा है; मयूरभंज स्कूल अडाणी खनन समूह के सहयोग से खोला गया है।

जैसे-जैसे आदिवासी बच्चे अपनी संस्कृति और जड़ों से अलग होते जाते हैं, ज़मीनों के शोषणकारी क़ायदों और हिंदू राष्ट्र के लिए ज़मीन उपजाऊ होती जाती है। इस खेल में मुसलमानों या ईसाइयों पर हमले में आदिवासियों के इस्तेमाल को भी नज़रअंदाज़ नहीं किया जा सकता। इस बदलाव का एक बड़ा उदाहरण गुजरात में 2002 का नरसंहार था, जहां दाहोद के ओबीसी हिंदुओं के साथ भील आदिवासी मुसलमानों पर हमलों के लिए जिम्मेदार थे। लेकिन अब यह दुश्मनी और हिंदुत्व के प्रतीकों के प्रति बढ़ा हुआ गौरव भौगोलिक क्षेत्रों या बड़े पैमाने पर होने वाली घटनाओं तक ही सीमित नहीं है, बल्कि हर जगह दिखाई देता है। सिवनी और सतना में मॉब लिंचिंग की घटनाओं में तथ्य-खोज के दौरान, जिसमें लेखक ने हिस्सा लिया था, हमने देखा कि गोंड आदिवासी और दलित (स्कूल छोड़ने वाले) गौ-रक्षक समूहों का हिस्सा थे और नियमित रूप से मुस्लिम पुरुषों पर हमला कर रहे थे और सतना की घटना में एक दर्जी की मौत हो गई थी।

धर्मनिरपेक्ष शिक्षा क्षेत्रों में धार्मिक कट्टरवाद चल रहा है - गंगा जमुना एच एस स्कूल

हम देखते हैं कि स्कूली दुनिया में 'सफाई' की प्रक्रिया चल रही है। हमारी पाठ्यपुस्तकों से मुगल इतिहास और मुस्लिम योगदान को हटाने की सचेत कोशिशें हैं ताकि कहीं भी कुछ भी इस्लामी या खास तौर पर इस्लाम के बारे में कुछ भी सकारात्मक न हो। ज़मीनी स्तर पर यह भौंडे रूपों में प्रकट हो रहा है, जिससे हम स्कूलों में टकराते हैं। मध्य प्रदेश के चुनावी वर्ष में ऐसे कई उदाहरण सामने आ रहे हैं जहां हम देखते हैं कि स्कूल को सांप्रदायिक सियासत के मैदान की तरह इस्तेमाल किया जा रहा है। पिछले दो महीनों में जब से जून में गर्मी की छुट्टियों के बाद स्कूल खुले हैं, हमने राज्य के विभिन्न हिस्सों में ऐसी घटनाओं के बारे में सुना है जहां शिक्षकों को बच्चों के माथे पर लंबे तिलक न लगाने के लिए कहने पर परेशान किया गया है। नियमित अंतराल पर अलग-अलग जिलों (इंदौर, 8.7.23; देवास, 21.7.23, शाहजापुर, 22.7.23, देवास, 5.8.23) के साथ-साथ हरियाणा समेत अन्य राज्यों से भी ऐसी खबरें आ रही हैं। इससे पता चलता है कि यह एक सहज प्रतिक्रिया के बजाय एक सोची-बूझी योजना है।

इस घटना को समझने के लिए दमोह (मध्य प्रदेश) में गंगा जमुना स्कूल की मान्यता रद्द किया जाना जांच करने लायक़ है। भले ही इस स्कूल को हमारे संविधान के अनुच्छेद 30 के मुताबिक राष्ट्रीय अल्पसंख्यक शैक्षणिक संस्थान आयोग (एमएचआरडी, भारत सरकार) द्वारा एक अल्पसंख्यक शैक्षणिक संस्थान की मान्यता है, स्कूल की वर्दी में शामिल सिर पर स्कार्फ पहनने को लेकर स्कूल पर हमला हुआ है।

स्थानीय सरकार की आधिकारिक समिति ने स्कूल प्रबंधन को क्लीन चिट दे दी, जिसमें कहा गया कि छात्रों पर हेडस्कार्फ़ पहनने के लिए कोई ज़बरदस्ती नहीं थी, लेकिन दक्षिणपंथी ताकतों द्वारा रातों-रात किए गए हमले ने चीजों को असहनीय बना दिया। एन सी पी सी आर के अध्यक्ष, प्रियांक कानूनगो द्वारा उकसाए गए सोशल मीडिया ट्रोलिंग के नतीजतन, मुस्लिम पहचान से जुड़ी किसी भी चीज़ पर हमला करने के लिए राजनीतिक दिग्गज मैदान में कूद पड़े। ऐसा ही एक उदाहरण मोहम्मद इकबाल (जिन्होंने 1920 के दशक में "सारे जहां से अच्छा हिंदुस्तान हमारा" भी लिखा है) द्वारा लिखा गया गीत 'लब पर आती है दुआ'है। यह गीत मानवता के लिए एक बच्चे की प्रार्थना है और सरकार द्वारा निर्धारित स्कूल पाठ्यपुस्तक का भी हिस्सा है। लेकिन सभी तर्कों के विपरीत, म.प्र. के मुख्यमंत्री ने एक रैली में घोषणा की कि वह ऐसे स्कूल को चलने नहीं देंगे जहाँ यह गाना गाए जाता हो (जैसा कि एक वार्षिक दिवस समारोह के वीडियो में देखा गया था जिसमें बच्चे तिरंगे झंडे को सजाते हुए दिख रहे थे)। इस कविता को लेकर इसी तरह की प्रतिक्रियाएँ उत्तर प्रदेश से भी सामने आई हैं, जहां एक सरकारी प्राथमिक विद्यालय के प्रधानाध्यापक को विश्व हिंदू परिषद के सदस्यों की शिकायतों के बाद निलंबित कर दिया गया था, जिसमें दावा किया गया था कि इसे गाने की अनुमति देने का प्रधानाध्यापक का निर्णय 'राष्ट्र-विरोधी' था।

बाल अधिकार आयोग में बैठे लोगों में भी उर्दू के प्रति तिरस्कार की भावना दिखती है, जो मानते हैं कि उर्दू पाठ्यपुस्तक साथ रखना भी धर्म परिवर्तन का संकेत है। लोगों को बधाई देने के मुस्लिम तरीके 'सलाम अलैकुम' के इस्तेमाल के कारण वार्षिक कार्यक्रमों को बदनाम किया गया है। यह रवैया न केवल किसी भाषा और संस्कृति के प्रति असम्मानजनक है, बल्कि हमारे संवैधानिक प्रावधानों के भी ख़िलाफ़ है। उर्दू हमारे संविधान की अनुसूची 8 में 22 आधिकारिक भाषाओं का हिस्सा है और इसे तीन भाषा फॉर्मूले के हिस्से के रूप में एम पी सरकार द्वारा मान्यता प्राप्त स्कूलों में पढ़ाया जाता है। गंगा जमुना एच एस स्कूल में अंग्रेजी और हिंदी के बाद इसे तीसरी भाषा के रूप में पढ़ाया जाता रहा है।

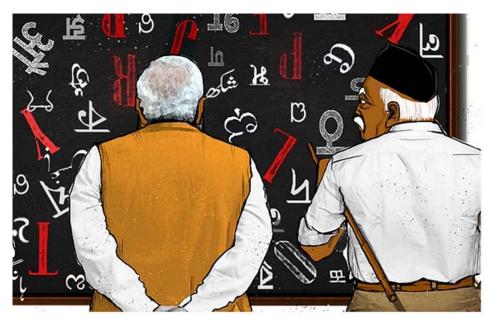
इसके अलावा, यह तथ्य कि सवालों के घेरे में आए तीन स्टाफ सदस्यों ने स्कूल में शामिल होने से बहुत पहले, या स्कूल बनने से पहले ही एक मुस्लिम परिवार में शादी कर ली थी, को पूरी तरह से नज़रअंदाज़ कर दिया गया और मीडिया में उनके खिलाफ पक्षपातपूर्ण रिपोर्टिंग का असर परिवारों पर पड़ा है, जो न केवल गैर-जिम्मेदाराना है, बल्कि नैतिक और कानूनी रूप से ग़लत है। आरोप है कि स्कूल ने नौकरी पाने के लिए उन पर धर्म परिवर्तन करने का दबाव डाला। जाहिर है कि हमारा राज्य अपने साथी और धर्म को चुनने में महिलाओं की अपनी सत्ता पर यक़ीन नहीं रखता है।

यह सब तब हुआ है जब स्कूल 10वीं कक्षा में 98.5% छात्रों के उत्तीर्ण होने का दावा कर सकता है, जबिक मध्य प्रदेश राज्य में उत्तीर्ण प्रतिशत 63.75% है। सामाजिक रूप से बिहष्कृत समूहों में ऐसे पिरणाम पाने के लिए स्कूल जाने वाले पहली पीढ़ी के बच्चों को तालीम पाने में आती औपचारिक शैक्षणिक रुकावटों को संवेदनशील शिक्षकों और प्रबंधन के जिरए दूर किया गया है। ऐसा लगता है कि विभिन्न धार्मिक समूहों के बच्चों के बीच दुरुस्त दोस्ती और/या अल्पसंख्यक बच्चों की उपलब्धियाँ आँखों में खटक रही थीं।

11 जून के बाद से, गंगा जमुना एच एस स्कूल के स्टाफ के तीन लोग 10 सप्ताह से अधिक समय से जेल में बंद रहे और तब जाकर उन्हें जमानत मिली, क्योंकि स्थानीय स्तर पर दबाव और प्रलोभन के साथ आरोप बढ़ते जा रहे हैं, और जल्द होने वाले विधानसभा चुनाव की वजह से यहाँ राजनीतिक दाँव बड़ा है।

असर - बच्चों में मुसलमानों के बारे में विकृत समझ

पुस्तकालय के दायरों में धर्म कैसे काम करता है, इसे समझने के सामूहिक प्रयास² में हाल ही में लेखक ने हिस्सा लिया। पहाड़ों के साथ-साथ मैदानी इलाकों से भी अनुभव आ रहे थे। मैं कुछ और चौंकाने वाले किस्से उद्धृत करना चाहूंगी जो दिखाते हैं कि सच्चाई कितनी बिगड़ चुकी है - हिमाचल प्रदेश के एक पुस्तकालय-शिक्षक ने फौज़िया गिलानी-विलियम्स द्वारा लिखित 'इस्मत की ईद' पढ़ते हुए यह बात लिख कर साझा की - नेक इरादे वाले एक शख्स के बारे में सरल कहानी है, जिसके अपने पिरवार के साथ मनोरंजक ग़लतफ़हमी हुई है; कहानी में वह अपनी पत्नी के लिए बुकी खरीदता है। जैसे ही कहानी पढ़ी जा रही थी, कक्षा 4 के बच्चों के समूह में से किसी ने हाथ उठाया और पूछा कि बुकी क्या है। इससे पहले कि उन्हें जवाब देने का मौका मिले, एक अन्य छात्र ने अपनी सीट से आवाज लगाई, "बेंगलुरु में वे पाकिस्तानी लड़कियां इसी बारे में लड़ रही हैं!" मध्य प्रदेश में एक पुस्तकालय से एक और तजुरबा है, जहां बच्चे यह जानकर हैरान रह गए कि उनकी पुस्तकालयाध्यक्ष एक मुस्लिम है, उन्होंने आगे



www.sabrangindia.in/decimating-schools-to-accommodate-shakhas/

² Bookworm Beyond Borders, January to March 2023 Edition. Bookworm, Goa.

टिप्पणी करते हुए कहा कि आप मुसलमानों की तरह नहीं हैं। "दीदी, आप तो मुसलमान नहीं लगतीं. आपका नाम, आपका स्वभाव, आपके कपड़े ये नहीं दर्शांते कि आप मुसलमान हैं। आप बहुत मिलनसार हैं, हमें आपसे बात करना आसान लगता है।" ऐसे ही एक और किस्सा बाल अधिकारों की सार्वभौमिकता की अवधारणा को समझने के लिए चर्चा में सामने आया। हमने यह समझाने के लिए कई बच्चों की तस्वीरें दिखाईं कि सभी पृष्ठभूमि के बच्चे, सामाजिक-आर्थिक परिस्थितियों के बावजूद, कुछ अधिकारों के हकदार हैं। एक युवा प्रतिभागी की तीखी प्रतिक्रिया थी कि एक बच्चा जो अपनी पोशाक से स्पष्टतः मुस्लिम है, उसे ये अधिकार नहीं मिलने चाहिए क्योंकि वह एक 'आतंकवादी' है।

मध्य प्रदेश के स्कूलों में हुए हमलों में, बजरंग दल और ए बी वी पी कार्यकर्ता कक्षाओं में घुस गए और बच्चों से 'जय श्री राम' और 'हनुमान चालीसा' के नारे लगवाए। यह और भी ख़ौफ़नाक है कि इन स्थितियों में, स्कूली बच्चे "क्या आप हिंदू नहीं हैं" के आह्वान पर प्रसन्नता और पृष्टि के साथ जवाब देते हैं। हालाँकि इस सवाल में कुछ भी ग़लत नहीं है, लेकिन जिस ज़ोर-शोर और ज़बर से इसे अमल में लाया जाता है उसका मतलब दूसरे को, कभी-कभी तो एक शिक्षक को भी, जो संतुलन और धर्मिनरपेक्ष दृष्टिकोण बनाए रखता है, नीचा दिखाना है। यह छिव हमें कर्नाटक में एक प्रमुख आरएसएस नेता द्वारा संचालित स्कूल, श्री राम विद्या केंद्र हाई स्कूल द्वारा आयोजित एक वार्षिक समारोह³ के दौरान बाबरी मस्जिद के पोस्टर को गिराने का मजा ले रहे बच्चों के दृश्य की ओर ले जाती है।

ये वास्तविक घटनाएं दिखलाती हैं कि छोटे बच्चों के दिमाग में एक समुदाय की पूर्वाग्रह-ग्रस्त पहचान जड़ बना रही है। हक़ीक़त में तजुरबा जैसा भी हो, उस के बावजूद, गैर-मुस्लिम बच्चे मुस्लिम समुदाय के प्रति नफरत फैला रहे हैं। जब मैं यहां 'गैर-मुस्लिम' लिखती हूँ, तो इसमें विभिन्न सामाजिक पहचान के लोग, आदिवासी, दलित, डीनोटिफाइड जनजातियां, बहुजन, जिनका इस्तेमाल आम तौर पर वोट बैंक के रूप में किया जाता है और जाति मानने वाले ऐसे हिंदू शामिल होते हैं, जिन्हें मुख्यधारा में होने का फायदा मिला है। हिंदू होने और किसी दूसरे को नीचा दिखलाने में गर्व करना ग़लत है। ये दुश्मनी जंगल की आग की तरह फैल गई है।

हमारी भूमिका - शिक्षकों को नफरत के खिलाफ खड़े होने की जरूरत है

ऐसे देश में जहां मुसलमानों में पहले से ही ऐसे युवाओं (3-35 वर्ष की आयु) का अनुपात सबसे अधिक है, जिन्होंने कभी औपचारिक शिक्षा में दाखिला नहीं लिया है, अलगाव और नफ़रत की वर्तमान व्यवस्था और भी अधिक से अधिक बच्चों को स्कूलों से बाहर ले जाएगी और उन्हें शिक्षा के अधिकार से वंचित कर देगी। कमज़ोर परिवारों के लिए, भेदभाव से बचाव और जीवित रहने के लिए स्कूल जाना स्वाभाविक रूप से सबसे अहम है।

हमें यह सुनिश्चित करने की आवश्यकता है कि आज के समय में हाशिये पर पड़े लोगों को अकादिमक जगत में जगह मिले। हमने भेदभाव के कारण भारत में छात्रों द्वारा स्कूल छोड़ने की उच्च दर देखी है। उच्च शिक्षा संस्थानों में भी आत्महत्याएँ दर्ज की जा रही हैं। ह्यूमन राइट्स वॉच (2014) के एक अध्ययन में मुस्लिम बच्चों को स्कूलों में होने वाले भेदभाव का विवरण दिया गया है। भगवान को नाराज करके उत्तराखंड में बाढ़ लाने का दोषी ठहराए जाने से लेकर मुस्लिम त्योहारों पर अपमानित होने तक, बच्चों ने यह सब झेला है।

³ www.thewire.in/communalism/rss-run-school-makes-children-re-enact-babri-masjid-demolition

मुज़फ़रनगर स्कूल का वीडियो, जिसमें स्कूल की मालिक और शिक्षक, तृप्ति त्यागी हिंदू बच्चों को महज 8 साल के मुस्लिम बच्चे को पीटने का निर्देश दे रही हैं, एक शिक्षक से होने वाले नुकसान का खुलासा कर रहा है। हिंदू वयस्कों के रूप में, हममें से कई लोग 'अन्य' के प्रति इस संदेह और अलगाव के वाहक हैं। आखिर एक छोटा बच्चा शिक्षक के लिए कैसा ख़तरा बन सकता है? बड़े पैमाने पर एक समुदाय के प्रति यह निराधार नफ़रत आखिर क्या है? यदि शिक्षक परवाह करना बंद कर दें, तो हमारे पास आखिर क्या बचेगा?

हमें मानवता के ढांचे और बुनियादी आधार से काम करने की जरूरत है। 'हिंदू' शिक्षक को भी स्कूल में एक 'शिक्षक', और अपनी निजी रस्मों में 'हिंदू' होना चाहिए। शिक्षकों के रूप में, हमें प्रत्येक बच्चे, प्रत्येक छात्र को पूरी तरह से अपनाने की ज़रूरत है। जहां पूर्वाग्रह को पनप रहो हों, वहां (जूझने को) हमारे पास मानव समानता के मूल मूल्य को प्रतिष्ठित करने के लिए तथ्य और संवैधानिक ढांचा है।

ऐतिहासिक वास्तविकताओं के बारे में पाठ को हिंदू राष्ट्रवादी एजेंडे के अनुरूप बिगाड़ा जाना बढ़ते जा रहा है। अपने छात्रों, सहकर्मियों और यहां तक कि खुद से भी, हमें उन पुराने मिथकों पर सवाल उठाने की ज़रूरत है जो कुछ "प्रकार के लोगों" को दूसरों से अधिक महत्व देते हैं; हमें अपने राष्ट्र के इतिहास और उन लोगों के बारे में तथ्यों को सीखने की जरूरत है, जिनकी हम अपने कुछ राजनेताओं से निंदा सुनते हैं।

ऊपर बताए गए उदाहरण में, पुस्तकालय-सुविधा-कर्ता ने धीरे-धीरे बच्चों को देश के बँटवारे के अनुभव से परिचित कराया और यह एक इतिहास का पाठ बन गया। मुसलमान होना क्या है, पाकिस्तान क्यों बना, कैसे लोगों ने दोस्त खोये, दोनों तरफ हुए नुकसान और दोनों तरफ की इंसानियत पर बात - इसके लिए बच्चों को भरपूर समय देना ज़रूरी था। यह तत्परता स्कूल के साथ-साथ शिक्षकों के स्तर पर भी जरूरी है।

झरना साहू⁴ बताती हैं कि कैसे शहीद स्कूल के बच्चे शिक्षकों के साथ खड़े होना चाहते थे, जब उन पर स्थानीय हिंदुत्व गुंडों द्वारा हमला किया जा रहा था। उन्होंने सवाल किया कि हमें पौराणिक हिंदू देवी सरस्वती का सम्मान करने की ज़रूरत क्यों है, जबिक वास्तव में ज्योतिबा फुले और सावित्री फुले ही असली लोग हैं, जिन्होंने हाशिये पर पड़े लोगों के लिए शिक्षा का मार्ग प्रशस्त किया। यह केवल शिक्षक समूह के भीतर अपनी और बच्चों की पृष्ठभूमि के बारे में राजनीतिक रूप से अधिक जागरूक होने के निरंतर प्रयासों के कारण ही संभव हो पाया है।

प्रतिकूल वातावरण छात्रों के सीखने में बाधा डालता है; असुरक्षित क्षेत्र से आए लोग और साथ ही वे लोग भी जो 'धौंस' की ताकत का हिस्सा बन रहे हैं, सभी प्रभावित होते हैं। शिक्षकों को हर किसी की जगह महफ़ूज़ रखने के लिए कदम उठाने की आवश्यकता है। बच्चों को शुरू से ही यह सीखने की जरूरत है कि दूसरे के धर्म का मजाक उड़ाना और/या अपना धर्म किसी पर थोपना ठीक नहीं है। सम्मान और प्रतिष्ठा के मूल्यों को हमारी पाठ-चर्या संबंधी शिक्षा का उतना ही हिस्सा होना चाहिए जितना कि शैक्षणिक सामग्री का।

हम इससे बच नहीं सकते कि हमारी भूमिका कितनी ज्यादा अहम हो गई है। सार्वजनिक वित्त पोषित स्कूल में यह मुमकिन होना था, पर अब निजी क्षेत्र का विकास सुनिश्चित करने में सार्वजनिक सिस्टम को नाक़ाबिल करवा दिया गया है।

⁴ www.hindi.roundtableindia.co.in/?p=11088

निष्कर्ष

अल्पसंख्यक धार्मिक समूहों के बच्चे संभवतः जिस चोट से गुजर रहे हैं, वह अब किसी एक दंगे तक या खास परिवारों तक सीमित नहीं है। अपने सामाजिक दायरे से बाहर किसी के साथ संपर्क में आने पर या अपने आसपास, वे लगातार नकारात्मकता का अनुभव करते हैं। जहां बच्चे बहुत कम उम्र से ही विभिन्न प्रकार की असुरक्षाओं और अविश्वास के माध्यम से दुनिया के साथ जुड़ रहे हैं, जहां वे अपने और अपने प्रियजनों के लिए डरते हैं और जीवित रहने का संघर्ष लगातार जीवन की निर्णायक विशेषता बन जाते हों, और सम्मान, देखभाल और गरिमा की बुनियादी जरूरतें पीछे धकेल दी गई हैं, ऐसे 'प्रतिकूल बचपन के अनुभव' हमारे भारतीय मॉडल के नस्लवाद की जड़ें हैं। हमने सदियों से इस जाति-भेद की अपार्थींड व्यवस्था को अंजाम दिया है और हिंदू राष्ट्र सिद्धांत से असहमत किसी पर भी इसे थोपते रहे हैं। हम 21वीं सदी में, आजादी के 76 साल बाद, अपने सामाजिक ताने-बाने को सफलतापूर्वक तोड़ रहे हैं, और जितना हो सके असभ्य तरीके से काम कर रहे हैं। इस वक्त, हिंदुत्व की राजनीतिक ज़मीन में सामूहिक लामबंदी का मुख्य हथियार तालीम है। जब हम ऐसे जीते हैं, तो नुकसान केवल उस देश का नहीं होता है, जो हमारे सामाजिक ताने-बाने में 'अनेकता में एकता' जैसे शब्दों को शामिल कर धर्मिनरपेक्ष होने का दावा करता है, या एक दूर के संविधान का ही नुकसान नहीं होता है। यह मानवता की हानि है। यह व्यक्तित्व की हानि है। हम कमतर इंसान बन जाते हैं।

आने वाले महीनों और वर्षों में हमें नफ़रत और रोजमर्रा के पूर्वाग्रहों का विरोध करते हुए और अपनी कक्षाओं में तथ्यों के साथ शालीनता से जुड़ते हुए, हम शिक्षकों को राष्ट्र को एक साथ फिर से एकजुट करना होगा।

लेखक तालीम के क्षेत्र में अग्रणी कार्यकर्ता हैं।
-मूल अंग्रेज़ी से गूगल द्वारा अनूदित

कैम्पस में बेड़ियाँ, शीर्ष पर फासीवादी!

फ़ासीवादी काल में कैंपस में लोकतंत्र कैसे खत्म होने के कगार पर पहुंच गया है निरंजन के. एस.

शिक्षा प्रणाली हमेशा और हर जगह मौजूद समाज-व्यवस्था और सामाजिक संबंधों का प्रतिबिंब होती है, इस बात से हम अंजान नहीं है। लेकिन फिर भी, कैंपस में लोकतंत्र पर अंकुश के बारे में बात करते हुए फासीवाद, वित्तीय पूंजी के सबसे प्रतिक्रियावादी और सबसे धौंसबाज वर्गों की खुली आतंकवादी तानाशाही और शिक्षा-प्रणाली में प्रतिक्रियावादी बदलाव के बीच संबंध को जाहिर करने के लिए इस तथ्य को दोहराना आवश्यक हो जाता है। भारत के इतिहास में हम आधी सदी पहले यानि आपातकाल के दौरान एक भीषण स्थिति से गुजर चुके हैं। लेकिन भारत में चल रहे वर्तमान फासीवादी हमले में आपातकाल के दौर से कुछ गुणात्मक अंतर हैं। ये गुणात्मक अंतर उन सभी प्रतिक्रियावादी वैचारिक और सामाजिक ताकतों के गठजोड़ का प्रतिबिंब हैं जो वित्तीय पूंजी के हितों से जुड़े हुए हैं। इसीलिए, शैक्षणिक संस्थानों और सार्वजनिक स्थानों पर छात्रों के लोकतांत्रिक अधिकारों पर हमले, नए और अभूतपूर्व तरीके से हो रहे हैं। इस पर नए नज़िरया तैयार करना फासीवाद-विरोधी संघर्ष को, और साथ ही,

वैज्ञानिक, धर्मनिरपेक्ष, लोकतांत्रिक, स्वतंत्र और सार्वभौमिक रूप से सुलभ शिक्षा प्रणाली के निर्माण के लिए हम जो संघर्ष कर रहे हैं, इसे आगे बढ़ाने के लिए महत्वपूर्ण हो जाता है।

सबसे पहले, हमें यह समझना चाहिए कि मौजूदा फासीवाद, नव-उदारीकरण के गर्भ से आया है। इस संबंध को एक आसान सवाल का जवाब देकर आसानी से समझा जा सकता है कि फासीवादी कैंपस में लोकतंत्र पर हमला क्यों कर रहे हैं? क्योंकि उन्हें लोकतांत्रिक और राजनीतिक संस्कृति को खत्म कर छात्रों को अराजनीतिकरण की खाई में धकेलना है, तािक तालीम के कारपोरेटीकरण के खिलाफ व्यापक विद्रोह फिर से पैदा न हो। वे इसे किसी रैखिक तरीके से नहीं कर रहे हैं। उनके पास कई तरीके हैं, वे सुविधा के अनुसार, स्थिति के अनुसार उपयोग करते हैं। अंततः, लोकतंत्र पर अंकुश डब्ल्यू टी ओ, आई एम एफ और विश्व-बैंक के मानदंडों के तहत शिक्षा के नव-उदारीकरण के एजेंडे को पूरा करता है। यहाँ, जे एन यू, जािमया आदि केंद्रीय विश्वविद्यालयों पर हमले का अलग ही एंगल है। ये विश्वविद्यालय हमेशा नव-उदारवाद-विरोधी और कारपोरेट-विरोधी संघर्ष की आवाज़ बनकर खड़े रहे। इससे छात्रों में सार्वजनिक शिक्षा को बचाने के लिए संघर्ष करने की चेतना पैदा हुई। इसीिलए ये विश्वविद्यालय ज्यादा लोकतंत्र पर फासीवादी हमलों के फोकस के दायरे बनते जा रहे हैं। सार्वजनिक शिक्षा की जगह मुनाफा कमाती निजी शिक्षा में बदलने से इन परिसरों में छात्र आवाज और राजनीति की मृत्यु हो जाएगी।

हाल के घटनाक्रम स्वयं इस व्यापक बदलाव को दर्शाते हैं। यह परिवर्तन केवल पुलिस और अर्ध-सैन्यीकरण को प्राथिमिक औजार की तरह इस्तेमाल करके ही नहीं किया गया है, बिल्क आर एस एस के संगठनों का उपयोग करके भी किया गया है। यार-बाजी के जिरए, आर एस एस विचारधारा वाले लोगों ने पहले ही नौकरशाही पर कब्जा कर लिया है, जिसमें विश्वविद्यालय का प्रशासन और एन टी ए जैसी परीक्षा आयोजित करने वाली एजेंसियां शामिल हैं। एन टी ए द्वारा निर्धारित सवालों के पैटर्न स्पष्ट रूप से प्रश्न सेट करने के उसके इरादे को दर्शाता है, जो "व्हाट्सएप यूनिवर्सिटी" के छात्रों के लिए अपेक्षाकृत आसान है। अब, एन सी ई आर टी के पाठ्यक्रम को भी इस तरह से बदल दिया गया है कि पाठ्यक्रम की उपर्युक्त वैज्ञानिक, धर्मिनरपेक्ष, लोकतांत्रिक सामग्री पूरी तरह से समाप्त हो सकती है। इसके लिए मुसलमानों, ईसाइयों और कम्युनिस्टों को हिंदुओं के दुश्मन के रूप में पेश करने का पुराना प्रचार किया जाता है। वे कहते हैं कि हमारा इतिहास मुस्लिम-पक्षपाती, मार्क्सवादी-लिखित और औपनिवेशिक मानसिकता वाला है और वे अपने भगवा नज़रिए के आधार पर इतिहास को फिर से लिखते हैं। यह दुनिया को समझने के मार्गदर्शक दर्शन के रूप में पतनशील और रद हो चुके हजार साल पुराने ब्राह्मणवाद को वापस लाकर हमारी तालीम पर एक वैचारिक हमला है। इसीलिए फासीवाद के दौर में लोकतंत्र पर हमलों की सामाजिक जड़ें उतनी सरल नहीं हैं जितनी सामान्य मामलों में होती हैं।

फासीवादी हमलों के उदाहरण के रूप में हम देख सकते हैं कि शिक्षण संस्थानों में क्या कुछ घट रहा है। ऐतिहासिक शाहीन बाग आंदोलन भारतीय इतिहास में मील के पत्थर में से एक था क्योंकि इसने फासीवादी शासन के खिलाफ छात्रों के बीच चुप्पी तोड़ी थी। आंदोलन को बहुत अधिक राजकीय दमन और इल्ज़ाम-थोपी का सामना करना पड़ा। फिर भी, कई छात्र, जिन्होंने सी ए ए-एन आर सी विरोधी आंदोलन की अगुवाई की, कठोर यू ए पी ए और अन्य कानूनों के आरोप में जेल में क़ैद हैं। साथ ही, मौजूदा पिरदृश्य में जामिया में असहमित को रोकने का योजनाबद्ध तरीका बहुत साफ देखा जा सकता है। शाहीन बाग आंदोलन के बाद के इस दौर में राज्य और प्रशासन का गठजोड़ हर तरह के दमनकारी तरीकों का इस्तेमाल कर रहा है। सफूरा ज़रगर की भर्ती मनमाने ढंग से रद्द करने, छात्र कार्यकर्ताओं को वर्जित सूची में डालने, प्रोफेसरों को निलंबित करने, जे टी ए चुनाव रद्द करने, कारण-बताओ नोटिस जारी करने, किसी भी प्रकार का विरोध प्रदर्शन आयोजित करने वाले को न्यायिक बांड जारी करने

और बड़े पैमाने पर सैन्यीकरण जैसी घटनाओं से यह स्पष्ट है।, कैंपस में लोकतंत्र पर ये अंकुश आख़िरकार जामिया के निजीकरण की तैयारी हैं। जामिया मेडिकल कॉलेज के लिए पी पी पी मॉडल की शुरूआत इस रोड-मैप को उजागर करती है।

दूसरी ओर, जे एन यू में लोकतंत्र पर हमले 2014 से शुरू हुए। लेकिन फीस में बढ़त विरोधी दौर में यह और तेज हो गया। जामिया के विपरीत यहाँअधिकांश हमले सीधे राज्य द्वारा नहीं किए जाते रहे। पुलिस और प्रशासन मूक दर्शक बने रहते हैं, जबिक एबीवीपी-आरएसएस के गुंडे छात्रों पर क्रूर हमले करते हैं। फीस बढ़ोतरी विरोधी प्रदर्शनों, राम-नवमी, बी बी सी डॉक्यूमेंट्री स्क्रीनिंग के दौरान और शिवाजी की जयंती पर कार्यकर्ताओं, विशेषकर वामपंथियों पर हमले, उन्होंने छात्रों पर हमला करके, उन पर पथराव करके और यहां तक कि जे.एन.एस.यू. कार्यालय तक में तोड़-फोड़ कर आतंक की स्थिति पैदा कर दी, जिसके कारण अंततः जे.एन.यू. में राजनीतिक चर्चा, वृत्तचित्र स्क्रीनेंग, सेमिनार आदि के एक प्रमुख स्थान, टेफ्लास, को बंद करना पड़ा। जे.एन.यू. की स्थिति को एस. रॉय के शब्दों में संक्षेप में कहा जा सकता है जिन्होंने अपने लेख, "फासीवाद पर" में लिखा है कि "साधारण बुर्जुआ तानाशाही और फासीवाद के बीच अंतर यह है कि जबिक साधारण बुर्जुआ तानाशाही राज्यपुलिस की मशीनरी और सेना के जिरए आतंक फैलाती है - फासीवादियों को जनता के एक हिस्से को बाकी आबादी पर हथियारबंद, हिंसक तरीके से तैनात करना पता है। पुलिस और सेना फासीवादी भीड़ को बचाने के गौण कार्य में सिमट कर रह गयी है।" दिल्ली विश्वविद्यालय में भी, हम किसान आंदोलन के दौरान आर एस एस- ए बी वी पी के गुंडों को नोदीप कौर जैसे श्रमिक कार्यकर्ताओं पर बल प्रयोग करते हुए देख सकते थे और पुलिस इन गुंडों के रक्षक के रूप में खड़ी थी। बी बी सी डॉक्यूमेंट्री स्क्रीनिंग मामले के दौरान भी पुलिस ने मनमाने ढंग से छात्रों को हिरासत में लिया और दो छात्र कार्यकर्ताओं पर कैंपस प्रतिबंध लगा दिया।

एस ए यू का हाल भी कोई अलग नहीं थ। यहाँ वजीफा और छात्रवृत्ति बंद करने का विरोध हुआ, जो वास्तव में शिक्षा के व्यवसायीकरण की प्रक्रिया की शुरुआत थी। SAU में असहमित का दमन, इस तेजी से आई नव-उदारवादी रणनीति का एक हिस्सा है जो अभी चल रही है। वजीफा मुद्दे के मामले में, हम देख सकते हैं कि 6 छात्रों को निष्कासित कर दिया गया, 4 को रस्टीकेट कर दिया गया, 1 पर प्रतिबंध लगाया गया और 1 को निलंबित कर दिया गया। केवल उन्हीं छात्रों को वापस लिया गया, जो या तो सेहत की समस्याओं से पीड़ित थे या जिन्हें बिना शर्त माफी मांगने के लिए मजबूर किया गया था। चार प्रोफेसरों को भी निलंबित कर दिया गया, जिन्होंने पुलिस बलों को परिसर में प्रवेश करने की अनुमित का विरोध करते हुए पत्र भेजा था। हाल ही में, अशोका विश्वविद्यालय के प्रोफेसर सब्यसाची दास ने अपने अकादिमक पेपर, जिसका नाम "डेमोक्रेटिक बैकस्लाइडिंग इन द वर्ल्ड्स लार्जेस्ट डेमोक्रेसी" था, को लेकर कई भाजपा-आर एस एस आई टी सेल से सोशल मीडिया पर आलोचना के बाद प्रोफेसर के रूप में अपनी नौकरी से इस्तीफा दे दिया। बीजेपी के एक सांसद ने इस रिसर्च पेपर को 'देश-विरोधी' बताया। साथ ही, विश्वविद्यालय ने यह कहते हुए पेपर से खुद को दूर कर लिया कि "हमारी जानकारी के अनुसार, जिकर किए गए परचे ने अभी तक महत्वपूर्ण समीक्षा प्रक्रिया पूरी नहीं की है और इसे किसी अकादिमक जर्नल में प्रकाशित नहीं किया गया है। फैकल्टी, छात्रों या कर्मचारियों द्वारा निजी तौर पर की गई सोशल मीडिया गतिविधि या सार्वजनिक सिक्रयता अशोका विश्वविद्यालय के रुख को प्रतिबिंबित नहीं करती है।" ये घटनाएं फासीवादियों द्वारा अकादिमक समुदाय पर लगाई गई बेड़ियों के स्पष्ट उदाहरण हैं।

जादवपुर विश्वविद्यालय में चल रहा मामला कैंपस लोकतंत्र पर अंकुश लगाने के तरीकों को देखने का एक बिल्कुल अलग नजरिया देता है। जादवपुर में, रैगिंग का उपयोग छात्र सक्रियता के खिलाफ अपमानजनक प्रचार करने के लिए औजार की

अभाशिअमं

तरह किया गया था। फासीवादी भाजपा और सत्तारूढ़ टी एम सी ने छात्र सिक्रयता को मौत के कगार पर धकेलने के लिए हाथ मिला लिया है। दक्षिणपंथी ताकतों ने वामपंथी ताकत, छात्र संघर्षों की विरासत और संघर्षों के नतीजतन बढ़ी राजनीतिक चेतना के खिलाफ अपने अभियान चलाए। भले ही वामपंथी ताकतें, जे यू पिरसर में लगातार मौजूदगी के बाद भी, इस संस्कृति को समाप्त नहीं कर सकीं, रैगिंग को छात्र सिक्रयता के पिरणाम के रूप में नहीं बल्कि "स्वतंत्र" संस्कृति के प्रसार के पिरणाम के रूप में देखा जा सकता है, जो वास्तव में यह छात्रों का एक प्रकार का अराजनीतिकरण था, और इसका संबंध छात्रों के बीच वर्चस्ववादी और बड़े-छोटे होने की प्रवृत्तियों के बढ़ने से है। लेकिन जादवपुर में, फासीवादी इसे उमीं और तथागत जैसे कार्यकर्ताओं पर आतंक फैलाने के अवसर के रूप में उपयोग कर रहे हैं। इस मुद्दे के संबंध में आर एस एस से जुड़े किसी भी शख्स को गिरफ्तार नहीं किया गया, लेकिन इन भयावह हमलों का सामना करने वाले दोनों कार्यकर्ताओं को पुलिस हिरासत में रखा गया। जादवपुर प्रशासन ने अधिसूचना जारी कर छात्रावास परिसर में पूर्व छात्रों के प्रवेश पर रोक लगा दी है। यहां, हम देख सकते हैं कि इस सच्चाई को छिपाते हुए कि यह छात्रों का अराजनीतिकरण है, जिसके कारण रैगिंग बढ़ी है, वे इसे जनता का अराजनीतिकरण करने के मौक़े की तरह इस्तेमाल कर रहे हैं, जो जादवपुर विश्वविद्यालय की लोकतांत्रिक संस्कृति को खत्म कर देगा।

पूरे भारत में, छात्रों पर फासीवादी हमले के परिणामस्वरूप कैंपस में लोकतंत्र पर नए प्रकार के हमले बढ़ रहे हैं। फासीवादी सबसे प्रतिक्रियावादी ताकतों से जुड़े छात्रों और पुलिस को अनुचित स्वतंत्रता देकर हमारी स्वतंत्रता की हत्या करते हैं। यहां रोजा लक्जमबर्ग के शब्द प्रासंगिक हो जाते हैं "केवल सरकार के समर्थकों के लिए, केवल एक पार्टी के सदस्यों के लिए स्वतंत्रता - चाहे वे कितने भी संख्या में क्यों न हों - कोई स्वतंत्रता नहीं है। आज़ादी हमेशा और खास तौर पर उस व्यक्ति के लिए आज़ादी है जो अलग तरह से सोचता है।" शिक्षण संस्थानों में हम लोकतंत्र के जिस संकट का सामना कर रहे हैं, उसका मुकाबला फासीवाद के खिलाफ छात्रों की व्यापक एकता से ही किया जा सकता है। यदि 2024 का परिणाम भाजपा के लिए अनुकूल हो गया तो लोकतांत्रिक आवाजें पूरी तरह से जहरीले, अमानवीय "हिन्दू-राष्ट्र" की भेंट चढ़ जाएंगीं। यह भारत के मजलूमों के लिए विनाशकारी होगा। कैंपस के लोकतंत्र को बचाने के लिए इसका मुकाबला करना छात्रों के लिए एक जरुरी काम बन गया है।

- निरंजन के. एस छात्र संगठन AIRSO की केंद्रीय संगठन समिति के संयोजक हैं। (मूल अंग्रेज़ी से गूगल द्वारा अनुवाद)



समान नागरिक संहिता: अगले कदम

ऑल इंडिया सेक्युलर फ़ोरम

13 जुलाई 2023 को 22वें विधि आयोग को समान नागरिक संहिता पर सौंपा ऑल इंडिया सेक्युलर फ़ोरम का ज्ञापन

भूमिका

1. पूरे भारत के लिए समान नागरिक संहिता (यू सी सी) के पहलुओं पर व्यापक मशविरे, खोज और विश्लेषण के बाद 21वें विधि आयोग ने सिफारिश की कि "समान नागरिक संहिता न तो ज़रूरी है और न ही वांछनीय है। . . . वजह यह है कि चूंकि भारत विविधताओं का राष्ट्र है, इसमें विभिन्न धर्म, विश्वास और संस्कार शामिल हैं और इसलिए विभिन्न सामुदायिक कानून मौजूद हैं, और इसे ध्यान में रखते हुए आयोग ने [यू सी सी जैसे] सभी सामुदायिक कानूनों को एक धर्मिनरपेक्ष कानून में संहिता-बद्ध करने के बजाय इन कानूनों में विभिन्न बदलावों का सुझाव दिया है, तािक संविधान द्वारा गारंटीकृत बुनियादी हक़ों का उल्लंघन न हो [इस ज्ञापन में बोल्ड फ़ॉन्ट के जिरए जोर हमारा है]।"

17 जून, 2016 को कानून और न्याय मंत्रालय के "हवाले" पर कार्रवाई करते हुए, 21वें विधि आयोग ने यू सी सी से जुड़े "बड़े मामलों" की "जांच" शुरू की और खोज करने और विशेषज्ञों के साथ मशविरा करने के बाद एक विस्तृत रिपोर्ट तैयार की। दो साल बाद 31 अगस्त, 2018 को आयोग ने "पारिवारिक कानून में सुधार" पर 182 पेज लंबा <u>मशविरा-परचा</u> प्रकाशित किया।

21वें विधि आयोग के उपरोक्त आकलन कि "**यू सी सी न तो ज़रुरी है और न ही वांछनीय है**" पर आज तक उच्चतम न्यायालय या 22वें विधि आयोग द्वारा सवाल नहीं उठाया गया है या इसका विरोध नहीं किया गया है। विशेष रूप से, 22वें विधि आयोग ने अब तक 21वें विधि आयोग की रिपोर्ट और अनुशंसा के अपने आलोचनात्मक मूल्यांकन को सार्वजनिक नहीं किया है। इसलिए 22वें विधि आयोग द्वारा यू सी सी पर राय आमंत्रित करने के लिए देश भर में जारी सार्वजनिक नोटिस का कोई मतलब नहीं है। यह 22वें विधि आयोग और केंद्र सरकार दोनों की मंशा के बारे में गंभीर शंकाएं पैदा करता है, जिनके निर्देश पर उपरोक्त सार्वजनिक सूचना जारी की गई थी।

क) राजनीतिक लाभ के लिए कानून आयोगों का गठन

निम्नलिखित छह पैराग्राफ (यानी नंबर 2 से नंबर 7) मुंबई स्थित पारिवारिक कानूनों की एक प्रतिष्ठित और व्यापक रूप से सराही गई विद्वान वकील और महिला अधिकार कार्यकर्ता, सुश्री फ्लाविया एग्नेस, के साथ एक विस्तृत ऑनलाइन साक्षात्कार पर आधारित हैं। (स्रोत: www.thewire.in/rights/ucc-bogey-muslim-bashing-electoral-needs-flavia-agnes)

2. सुश्री फ्लाविया एग्नेस ने 2024 में होने वाले आम चुनावों के संदर्भ में समान नागरिक संहिता को उठाने के समय और इरादे पर सवाल उठाया है। दिलचस्प बात यह है कि मोदी सरकार ने 21वें विधि आयोग की रिपोर्ट के सुझावों पर पिछले 4 वर्षों में कुछ नहीं किया है जबिक उसमें मजहब या संस्कृति की परवाह किए बिना जेंडर भेदभाव को समाप्त करने और सभी परिवारों में असमान संपत्ति अधिकारों को हटाने का आह्वान किया गया था। फिर भी राजनीतिक ज़रूरतों को पूरा करने के लिए यू सी सी के विवादास्पद मुद्दे को उछाला जा रहा है।

- 3. उनके [एग्नेस] के अनुसार, यू सी सी पर राय मांगने का मक़सद मुस्लिम नेतृत्व को उत्तेजित करना और सत्तारुढ़ दल के लिए राजनीतिक लाभ प्राप्त करना है। वह कहती हैं, मुस्लिमों पर प्रहार के जिरए दक्षिणपंथी राजनीति को आगे बढ़ाने की जमीन तैयार की जा रही है। ''जैसे-जैसे यह मुद्दा विवादास्पद होता जाएगा, इससे सत्तारुढ़ दल को [अपने वोट बैंक के धार्मिक ध्रुवीकरण के माध्यम से] लाभ होगा। राय माँगने का मुख्य मक़सद यही है। पूरा विचार यू सी सी विवाद को जल्द ही आने वाले चुनावों के संदर्भ में राजनीतिक क्षेत्र में लाने का है, ''सुश्री एग्नेस ने कहा।
- 4. सुश्री फ्लाविया एग्नेस ने यू सी सी पर लोगों के विचार जानने के लिए 22वें विधि आयोग की मंशा पर भी सवाल उठाया, जबिक इसी मुद्दे पर पिछले विधि आयोग की संक्षिप्त रिपोर्ट धूल फांक रही है। जैसा कि उन्होंने कहा, "यू सी सी का मुद्दा 21वें विधि आयोग द्वारा तय किया गया है। लेकिन 22वां विधि आयोग फिर से पूछ रहा है कि क्या आपको यू सी सी चाहिए. . . !"
- 5. 21वें विधि आयोग की रिपोर्ट में यू सी सी लागू करने का विरोध करते हुए भेदभाव खत्म करने और महिलाओं को आर्थिक अधिकार देने के कई सुझाव शामिल हैं। उदाहरण के लिए, मशविरा-परचा के पहले पन्ने पर, 21वें विधि आयोग ने यह स्पष्ट कर दिया कि यू सी सी पर कोई आम सहमित नहीं बन सकती है, और इसलिए, **बुनियादी हक़ों का खंडन किए बिना** "विविधता को बचाए रखना" समय की मांग है। मशविरा परचा में कहा गया है:

"समान नागरिक संहिता पर किसी आम सहमित के अभाव में आयोग ने महसूस किया कि आगे बढ़ने का सबसे अच्छा तरीका सामुदायिक कानूनों की विविधता को संरक्षित करना हो सकता है, लेकिन साथ ही यह सुनिश्चित करना होगा कि सामुदायिक कानून भारत के संविधान में दिए गए बुनियादी हक़ों का खंडन न करें।"

अहम बात है कि 21वें विधि आयोग ने यू सी सी को न केवल "**न तो ज़रूरी और न ही वांछनीय**" कहा, बल्कि जेंडर-भेदभाव को समाप्त करने और गैर-बराबरी को दूर करने का भी समर्थन किया:

इसलिए यह आयोग, **न ज़रूरी और न ही इस चरण पर वांछनीय, समान नागरिक संहिता तैयार करने के बजाय,** भेदभाव वाले कानूनों से निपटा है। आज अधिकांश देश समुदायों में फ़र्क को मान लेने की दिशा में आगे बढ़ रहे हैं, और फ़र्क का होना मात्र भेदभाव नहीं दर्शाता, बल्कि यह एक मजबूत लोकतंत्र का द्योतक है। "

- 6. सुश्री एग्नेस ने कहा कि यह [2018 मशविरा रिपोर्ट], "आर्थिक अधिकारों पर केंद्रित" और "गैर-भेदभाव" पर केंद्रित है। 21वीं विधि आयोग की रिपोर्ट .. . का उद्देश्य विभिन्न सामुदायिक कानूनों में जहां कहीं भी भेदभाव मौजूद है, उसे "समाप्त करना" है। इसके अलावा, इसने इस तथ्य को रेखांकित किया कि हिंदू अविभाजित पारिवारिक संपत्ति महिलाओं के खिलाफ "भेदभावपूर्ण" थी, लेकिन इसका उपयोग "केवल हिंदुओं द्वारा आयकर-चोरी" के लिए किया जाता था, और इस प्रथा को समाप्त करने का आह्वान किया गया था।
- 7. उनके अनुसार, "21वें विधि आयोग की मुख्य चिंता यह थी कि **हिंदू अविभाजित परिवार की संपत्ति** को खत्म कर दिया जाए और हिंदुओं को मिलने वाले आयकर लाभ को खत्म कर दिया जाए। इसी तरह, इसने **संपत्ति के अधिकारों के संबंध** में मुस्लिम सामुदायिक कानूनों के संहिताकरण का भी सुझाव दिया और यह कहा कि सुन्नियों और शियाओं के बीच फ़र्क नहीं होना चाहिए। निसंतान विधवाओं सिहत महिलाओं और विधवाओं को उनकी संपत्ति का अधिकार मिलना चाहिए। **ईसाइयों और पारिसयों** के संबंध में भी सुझाव हैं। यदि कोई **पारसी**, पारसी समुदाय से बाहर विवाह करती है, तो वह अपना

अधिकार खो देती है। सिफ़ारिश यह थी कि ऐसी प्रथाओं की इजाज़त नहीं दी जानी चाहिए। **ईसाइयों के संबंध में**, विधवाओं और विरासत के संबंध में जो भी भेदभाव मौजूद है, वह दूर होना चाहिए। स्पेशल मैरिज एक्ट को लेकर भी जो भी भेदभाव है, उसे दूर किया जाना चाहिए. . . . 21वें विधि आयोग का एक और अहम सुझाव तलाक होने पर वैवाहिक संपत्ति के विभाजन के बारे में था - जो कानून में कहीं भी मौजूद नहीं है और इसने "विवाह के बाद अर्जित संपत्ति के समान विभाजन की सिफारिश की। रिपोर्ट के प्रकाशन के चार साल बाद भी केंद्र सरकार ने एक उंगली भी नहीं हिलाई!

ख) यू सी सी का विरोध देश भर में विविध समुदायों द्वारा किया जाता है, न कि केवल मुसलमानों द्वारा: जरूरत है कि हम सियासत से प्रेरित और भ्रामक हिंदू-मुस्लिम बाइनरी फंदे से बाहर निकलें

जानबूझकर **एक ग़लत धारणा** बनाई और पोषित की जा रही है कि यू सी सी का विरोध सिर्फ मुसलमान करते हैं। जैसा कि नीचे विस्तार से बताया जाएगा, सच यह है कि भारत के **लद्दाख** (बौध) से लेकर **लक्षद्वीप** (मुस्लिम) और **कच्छ** (कच्छी हिंदू) से लेकर **कोहिमा** (ईसाई बहु नागा जनजाति) तक संविधान द्वारा संरक्षित विविध समुदायों का एक व्यापक वर्ग (नीचे अनुभाग 'सी' देखें), यू सी सी का दृढ़तापूर्वक विरोध करता है, क्योंकि यह उनके उन परिवार/निजी मान्यताओं पर आधिपत्य स्थापित करेगा और उन्हें नष्ट कर देगा, जिनकी जड़ें ऐतिहासिक रूप से संविधान में निहित तर्कसंगत, न्यायसंगत और सामाजिक रूप से उचित सांस्कृतिक ढांचे में हैं।

भारत के विविध भू-सांस्कृतिक क्षेत्रों से यू सी सी लागू करने के विरोध की आवाज़ें: 'विविधता में एकता' के लिए लड़ना, एकरूपता के लिए नहीं

(स्रोत: www.scroll.in/article/1052115/why-the-uniform-civil-code-has-few-takers-in-the-north-east) आलोचकों का कहना है कि समान नागरिक संहिता उन विशेषाधिकारों को कमजोर कर देगी जो संविधान उत्तर पूर्व और देश में अन्य जगहों पर मौजूद आदिवासी समुदायों को देता है। यहां कुछ उदाहरण दिए गए हैं। अनुच्छेद 371 (ए, बी, सी, एफ, जी, एच) और संविधान की **छठी अनुसूची** में निहित ये विशेष अधिकार, समुदायों को उनके प्रथागत कानूनों के तहत कार्य करने के लिए कुछ हद तक स्वायत्तता की अनुमित देते हैं। गुवाहाटी स्थित सामाजिक वैज्ञानिक वाल्टर फर्नांडीस ने समझाया: "उनके [आदिवासी समुदाय] प्रथागत कानून प्रभावित होंगे और ये उनकी पहचान के लिए बुनियादी हैं।"

27 जून, 2023 को भोपाल में अपने भाषण के दौरान पीएम मोदी के प्रस्ताव पर असहमित जताने वाले पहले लोगों में मेघालय के मुख्यमंत्री कॉनराड संगमा (भाजपा सहयोगी) थे। शिलांग में पत्रकारों से बात करते हुए संगमा ने कहा कि "सामान्य नागरिक संहिता 'भारत के विचार' के विपरीत है, जिसकी ताकत और पहचान इसकी विविधता है।"

क्षेत्र में भारतीय जनता पार्टी की प्रमुख सहयोगी नेशनल पीपुल्स पार्टी के प्रमुख संगमा ने कहा, "एक राजनीतिक दल के रूप में, हमें एहसास है कि पूरे उत्तर पूर्व में वास्तव में अद्वितीय संस्कृतियां हैं।" "हम चाहते हैं कि ये बने रहें और इन्हें छुआ न जाए।"

छठी अनुसूची के प्रावधान राजधानी शिलांग के कुछ हिस्सों को छोड़कर लगभग पूरे मेघालय पर लागू होते हैं।

नेशनल पीपुल्स पार्टी के सांसद डब्ल्यू आर खरलुखी ने संगमा की चिंताओं को विस्तार दिया। उन्होंने कहा, "मेघालय एक मातृसत्तात्मक समाज है और कुलों का नाम महिला के नाम पर रखा जाता है।" "विवाह में भी, हमारा अपना कानून है। अंग्रेज़ भी हमारी व्यवस्था नहीं बदल सके।"

राज्य के नागरिक समाज समूहों ने भी प्रस्ताव पर तीखी प्रतिक्रिया व्यक्त की है। उन्होंने <u>चेतावनी</u> दी है कि प्रथागत कानूनों के साथ छेड़छाड़ करने का कोई भी कदम आंदोलन को जन्म देगा।

खासी छात्र संघ (के एस यू) ने सोमवार को केंद्र से समान नागरिक संहिता (यू सी सी) को लागू करने के अपने फैसले की गहन जांच करने को कहा और अगर केंद्र अड़ा रहा तो नागरिकता संशोधन अधिनियम (सी ए ए) जैसे विरोध प्रदर्शन की चेतावनी दी।

खासी हिल्स स्वायत्त जिला परिषद (के एच ए डी सी) ने सर्वसम्मित से एक प्रस्ताव पारित किया है, जिसमें केंद्र से छठी अनुसूचित क्षेत्रों में यू सी सी लागू नहीं करने का आग्रह किया गया है।

सिविल सोसाइटी महिला संगठन की अध्यक्ष एग्नेस खारशिंग ने कहा कि अगर सरकार को एक समान संहिता लागू करनी है, **तो उसे यह सुनिश्चित करना चाहिए कि स्थानीय परंपराओं और रीति-रिवाजों को खत्म नहीं किया जाएगा**।

"**संविधान भारत के लोगों के लिए है, न कि कुछ सियासी ताकतों को खुश करने के लिए**," खर्शिंग ने भाजपा की ओर इशारा करते हुए कहा, जो समान नागरिक संहिता की प्रबल समर्थक है।

नागालैंड: अनेक नागा जनजातियाँ

'सब के लिए सही एक साइज़' वाला नज़रिया'

(स्रोत: www.morungexpress.com/unequivocal-opposition-to-ucc-gains-momentum-in-nagaland)

नागालैंड में, जहां **संविधान का अनुच्छेद 371ए** राज्य की प्रथागत प्रथाओं को विशेष सुरक्षा प्रदान करता है, समान नागरिक संहिता के प्रस्ताव को <u>तीव्र विरोध</u> का सामना करना पड़ा है।

नागाओं की सर्वोच्च संस्था होहो ने कड़े शब्दों में एक बयान में कहा कि **"सब के लिए सही एक साइज़"** नज़िरए को लागू करने की कोई भी कोशिश नागाओं के संवैधानिक प्रावधानों, अद्वितीय इतिहास और स्वदेशी संस्कृति और पहचान साथ ही देश के सिद्धांत को कमजोर कर देगी।"

संगठन के महासचिव के एलु एनडांग ने इस प्रस्ताव की आलोचना की। नडांग ने फोन पर स्क्रोल पत्रिका को बताया, "तथाकथित बहुसंख्यक या हिंदू कानून आदिवासियों पर स्वीकार्य या लागू नहीं हो सकते हैं। " "हिन्दू पहले अपनी जाति व्यवस्था दूर करें। "

एक अन्य नागा नागरिक समाज संगठन ने राज्य के सभी 60 विधायकों के घरों को जलाने की खुली धमकी जारी कर दी। बीजेपी की सहयोगी सत्तारूढ़ नेशनलिस्ट डेमोक्रेटिक प्रोग्नेसिव पार्टी ने भी इस मामले पर कड़ा रुख अपनाया है। एक <u>बयान</u> में कहा गया, "**यूसीसी को लागू करने से भारत के अल्पसंख्यक समुदायों और जनजातीय लोगों की स्वतंत्रता और** **अधिकारों पर नकारात्मक प्रभाव पड़ेगा और राष्ट्रीय एकता के लिए इसके प्रतिकूल परिणाम होंगे।** " बयान में कहा गया है कि एक समान संहिता लागू करने से "शांतिपूर्ण माहौल को खतरे में डालने की गंभीर संभावना है।"

मिज़ोरम

'बहुसंख्यक-वाद' का प्रोजेक्ट

मिज़ोरम, जो फरवरी में समान नागरिक संहिता के विरोध में <u>प्रस्ताव</u> पारित करने वाला देश का पहला राज्य था, अपनी बात पर अड़ा हुआ है। मिज़ोरम पर मिज़ो नेशनल फ्रंट का शासन है, जो भाजपा के नेतृत्व वाले राष्ट्रीय जनतांत्रिक गठबंधन का एक घटक है जो भारत पर राज कर रहा है।

आदिवासी-बहुल राज्य के विशाल बहुमत को <u>संविधान के अनुच्छेद 371जी</u> का संरक्षण प्राप्त है - जो नागालैंड में अनुच्छेद 371ए की तरह, मिज़ो-जातियों को कुछ पारंपरिक अधिकारों की गारंटी देता है।

राज्य के एकमात्र राज्यसभा सांसद के वनलालवेना, जो राष्ट्रीय जनतांत्रिक गठबंधन द्वारा समर्थित सत्तारूढ़ मिज़ो नेशनल फ्रंट से हैं, ने कहा कि भारत की वास्तविकताएँ ऐसी हैं कि एक समान नागरिक संहिता नामुमिकन है। उन्होंने कहा, "भारत के नागरिक एकरूप नहीं हैं.'' "हम अलग-अलग जनजातियाँ और समुदाय हैं। विभिन्न जनजातियों के अलग-अलग प्रथागत कानून और संस्कृतियाँ हैं; इसलिए हमारे यहाँ एक ही नागरिक कानून नहीं होना चाहिए।"

आइज़ोल स्थित राजनीति-शास्त्री जोसेफ के लालफकजुआला ने कहा कि समान नागरिक संहिता विवाह, तलाक, विरासत और गोद लेने के "अक्सरीयती" (बहुसंख्यकवादी) विचार को बढ़ावा देती है। उन्होंने दावा किया, यह "संविधान की मूल संरचना के खिलाफ" था। लालफकजुआला ने कहा, "यू सी सी को लागू करने की प्रेरणा के पीछे की राजनीति को बहुसंख्यक समुदाय को खुश करने के लिए /हिंदू/ दक्षिणपंथी एजेंडे के संदर्भ में समझा जा सकता है।" "यू सी सी का स्वरूप समायोजन करने का नहीं है है।"

सिक्किम

सिक्किम में भी समान नागरिक संहिता के समर्थन में पीएम मोदी के भाषण के बाद विरोध प्रदर्शन शुरू हो गया है। नागरिक समाज समूहों ने कहा है कि ऐसा सामान्य कोड स्थानीय समुदायों के हितों के लिए हानिकारक होगा, जो संविधान के अनुच्छेद 371 एफ के तहत कुछ रियायतों का फायदा लेते हैं।

बीजेपी का पीछे हटना?

उत्तर पूर्व में दिन-ब-दिन बढ़ते प्रतिरोध के साथ, केंद्र एक कदम पीछे हटता दिख रहा है। 3 जुलाई, 2023 को इस मामले पर चर्चा के लिए बुलाई गई कार्मिक, सार्वजनिक शिकायत, कानून और न्याय पर संसदीय स्थायी समिति की बैठक के दौरान, भाजपा सांसद और कानून और न्याय पर संसदीय स्थायी समिति के अध्यक्ष **सुशील कुमार मोदी** ने कथित तौर पर कहा कि उत्तर पूर्व और देश के अन्य हिस्सों में आदिवासी आबादी को समान नागरिक संहिता के दायरे से बाहर किया जाना चाहिए।

आगे बढ़ने का एकमात्र रास्ता भारत के संस्थापक सिद्धांत - **अनेकता में एकता** - को स्वीकार करना और उसे आत्मसात करना है। यह वह महत्वपूर्ण सबक है जो हमने ब्रिटिश साम्राज्यवाद के खिलाफ भारतीय लोगों के 150 से अधिक वर्षों के ऐतिहासिक स्वतंत्रता संग्राम से सीखा है। भारत इस अमूल्य पाठ को कमजोर, अवमूल्यन या विकृत करने का जोखिम नहीं उठा सकता।

ग) राज्यों के संघीय अधिकारों की विविधता और सर्वोच्चता का संवैधानिक संरक्षण

अनुच्छेद 1(1): भारत, अर्थात् इंडिया, राज्यों का संघ होगा।

अनुच्छेद ३७१ए : नागालैंड राज्य के संबंध में विशेष प्रावधान -

- (1) इस संविधान में किसी बात के बावजूद, -
- (ए) निम्नांकित के संबंध में संसद द्वारा पारित कोई भी कानून
- (i) नागाओं की धार्मिक या सामाजिक प्रथाएं,
- (ii) परम्परागत नागा प्रथाएँ व प्रक्रियाएँ,
- (iii) नागरिक और आपराधिक न्याय का प्रशासन जिसमें नागा प्रथागत कानून के अनुसार निर्णय शामिल हैं,
- (iv) भूमि और उसके संसाधनों का स्वामित्व और हस्तांतरण,

नागालैंड राज्य पर तभी लागू होगा जब तक कि नागालैंड की विधान सभा एक प्रस्ताव द्वारा ऐसा नहीं करती।

अनुच्छेद ३७१जी: मिज़ोरम राज्य के संबंध में विशेष प्रावधान -

- (1) इस संविधान में शामिल किसी बात के बावजूद, -
- (ए) निम्नांकित के संबंध में संसद द्वारा पारित कोई भी कानून
- (i) मिज़ो-जातियों की धार्मिक या सामाजिक प्रथाओं,
- (ii) परम्परागत मिज़ो प्रथाएँ व प्रक्रियाएँ,
- (iii) मिज़ो प्रथागत कानून के अनुसार निर्णयों को शामिल करते हुए नागरिक और आपराधिक न्याय का प्रशासन,
- (iv) भूमि का स्वामित्व और हस्तांतरण,

मिज़ोरम राज्य पर लागू नहीं होगा जब तक कि राज्य की विधान सभा एक संकल्प द्वारा मंज़ूरी न दे बशर्ते कि इस खंड में कही बातों में कुछ भी संविधान (तिरपनवाँ संशोधन) अधिनियम, 1986 के प्रारंभ होने से ठीक पहले मिज़ोरम केंद्र शासित प्रदेश में लागू किसी भी केंद्रीय अधिनियम पर लागू नहीं होगा।

संघीय संरचना और संघीय हक़ों की संवैधानिक पवित्रता

समवर्ती सूची में परिवार/सामुदायिक कानून: परिवार से संबंधित कानून (जैसे यू सी सी) पारित करने के लिए केंद्र पर प्रतिबंध सातवीं अनुसूची (अनुच्छेद 246): सूची III - समवर्ती सूची

प्रविष्टि संख्या 5: विवाह और तलाक, शिशु और नाबालिंग, गोद लेना, वसीयत, निर्वसीयत और उत्तराधिकार, संयुक्त परिवार और विभाजन, सभी मामले जिनके संबंध में न्यायिक कार्यवाही में शामिल पक्ष इस संविधान के प्रारंभ होने से पहले अपने सामुदायिक कानून के अधीन थे।

प्रविष्टि संख्या 6: कृषि भूमि के अलावा अन्य संपत्ति का हस्तांतरण, कार्यों और दस्तावेजों का पंजीकरण।

प्रविष्टि संख्या 13: सिविल प्रक्रिया, जिसमें इस संविधान के प्रारंभ में सिविल प्रक्रिया संहिता में शामिल सभी मामले, सीमा और मध्यस्थता शामिल हैं।

प्रविष्टि क्रमांक 15: घुमंतू, खानाबदोश और प्रवासी जनजातियाँ।

घ) यू सी सी: भारत की समृद्ध विविधता और बहुलता बनाम एकरूपता

(स्रोत: www.tribuneindia.com/news/nation/if-one-family-cant-run-on-2-laws-how-can-the-nation-pm-modi-pitches-for-ucc-in-poll-year-520705)

चुनावी वर्ष में समान नागरिक संहिता (यू सी सी) की ज़रूरत पर पहली सार्वजनिक टिप्पणी में, प्रधान मंत्री नरेंद्र मोदी ने कहा, "यदि एक परिवार दो कानूनों पर नहीं चल सकता है, तो एक राष्ट्र कैसे चल सकता है?

(स्रोत: www.hindustantimes.com/india-news/family-nation-not-same-ucc-cant-be-forced-chidambarams-criticism-101687921313249.html)

पूर्व वित्त मंत्री श्री. पी चिदंबरम ने कहा कि समान नागरिक संहिता को सही ठहराने के लिए एक परिवार और राष्ट्र के बीच तुलना करना ग़लत है, जैसा कि पीएम मोदी ने मध्य प्रदेश में पार्टी कार्यकर्ताओं को अपने संबोधन में किया था। उन्होंने आगे कहा: "परिवार खून के रिश्तों से एक साथ जुड़ा होता है। एक राष्ट्र को संविधान द्वारा एक साथ लाया जाता है जो एक राजनीतिक-कानूनी दस्तावेज है।"

एक परिवार में भी विविधता होती है। भारत के संविधान ने भारत के लोगों के बीच विविधता और बहुलता को मान्यता दी, "विशेष रूप से, संविधान ने इन विचारों यानी विविधता और बहुलता को पनपने के लिए पर्याप्त प्रावधान प्रदान किए (ऊपर अनुभाग 'सी' देखें)। हालाँकि, हाल के वर्षों में, 'बहुसंख्यकवादी' राजनीतिक परियोजना ने एकरूपता के प्रतिगामी विचार को मजबूत किया है। यह भारत की समृद्ध विविधता के विरुद्ध कार्य करता है, जिससे राजनीति, मीडिया, शिक्षा, धर्म, दर्शन, संस्कृति, कानून, साहित्य, ललित कला और यहां तक कि वैज्ञानिक अनुसंधान (उदाहरण के लिए एन ई पी, 2020, का एन आर एफ एजेंडा) सिहत जीवन के सभी क्षेत्रों में एक आधिपत्य की धारणा के रूप में एकरूपता लागू हो गई है। यह प्रवृत्ति विविधता और बहुलता को विलोप की ओर धकेल रही है और एकरूपता लोकतांत्रिक स्थान पर बढ़ती जा रही है। विडंबना यह है कि विविधता और बहुलता ही प्राचीन भारत की सभ्यता की पहचान रही है!

इस अस्वीकार्य और दुखद लेकिन 'लोकप्रिय' घटना का प्रमाण सत्तारूढ़ शासन द्वारा लगातार निम्नलिखित अप्रासंगिक, बेमानी और भ्रामक राजनीतिक नारे गढ़ना है: एक राष्ट्र, एक कानून / एक राष्ट्र, एक चुनाव /एक राष्ट्र, एक प्रवेश परीक्षा / एक राष्ट्र, एक भाषा / एक राष्ट्र, एक धर्म / एक राष्ट्र, एक दर्शन / एक राष्ट्र, एक ज्ञान प्रणाली / एक राष्ट्र, एक नेता। इसी वजह से ' पारिवारिक/सामुदायिक क़ानूनों की प्रभावशाली और समृद्ध विविधता की जांच किए बिना ही **बहुसंख्यक परियोजना**' के रूप में यू सी सी तेजी से राजनीतिक ज़मीन पकड़ रही है, जैसा कि ऊपर अनुभाग 'ख' में बताया गया है। इस तरह के गलत नारे समाज और देश को अपूरणीय क्षति पहुंचाते हैं और लोगों को परेशानी होती है।

ङ) संविधान सभा और संविधान: जब फायदा दिखे तभी हवाला देना

चूंकि माननीय प्रधान मंत्री ने हाल ही में 2014 के भाजपा घोषणापत्र के अनुरूप यू सी सी को लागू करने के लिए अपने एजेंडे की घोषणा की है, पार्टी नेतृत्व के साथ-साथ विरष्ठ मंत्री भी दावा कर रहे हैं कि वे बस वही कर रहे हैं जैसा कि संविधान राज्य को करने का निर्देश देता है। इस दावे को परिप्रेक्ष्य में देखने की जरूरत है।

संविधान सभा में यू सी सी

संविधान सभा में यू सी सी पर गहन बहस हुई थी जिसमें विभिन्न धर्मों और सांस्कृतिक जड़ों का प्रतिनिधित्व करने वाले सदस्यों ने उत्साहपूर्वक भाग लिया। फिर भी सहमित नहीं बन पाई. यही संभावित कारण है कि यू सी सी को अंततः संविधान के भाग IV में रखा गया, न कि भाग III में। एक और अहम वजह है कि यू सी सी को भाग III में मौलिक अधिकार के रूप में प्रतिष्ठापित नहीं किया गया। यह तर्क दिया गया कि यू सी सी पर बहस करने वाली संविधान सभा एक निर्वाचित निकाय नहीं थी। अतः तत्कालीन विधानसभा में यू सी सी जैसे विवादास्पद मुद्दे को आगे बढ़ाना उचित नहीं होगा। इस बात पर सहमित हुई कि आगामी लोकसभा चुनाव की प्रतीक्षा की जाएगी और निर्वाचित निकाय को यू सी सी पर विचार करने और बहस करने दिया जाएगा तािक इसे एक कानून के रूप में अनुमोदित किया जा सके।

क) अब हमें बताया गया है कि यह संविधान के **भाग IV में अनुच्छेद 44** है जो यू सी सी का प्रावधान करता है जिसे संदर्भ के लिए नीचे उद्धृत किया गया है:

44. नागरिकों के लिए समान नागरिक संहिता - राज्य पूरे भारत में नागरिकों के लिए एक समान नागरिक संहिता सुनिश्चित करने का प्रयास करेगा।

जो देखा और उठते सवाल

- (i) यू सी सी 2014 से भाजपा के घोषणापत्र में है। फिर भी, यू सी सी का मुद्दा पिछले 9 वर्षों से भाजपा की केंद्र सरकार के लिए प्राथमिकता वाला एजेंडा क्यों नहीं रहा है?
- (ii) यदि यू सी सी संविधान में है, तो भाजपा की केंद्र सरकार ने "पारिवारिक कानून में सुधार" पर अपने 182 पेज लंबे मशविरा परचा (31 अगस्त, 2018) में 21वें विधि आयोग की सिफारिशों को लागू क्यों नहीं किया है?

21वें विधि आयोग की रिपोर्ट में स्पष्ट रूप से **किसी मजहब या संस्कृति की परवाह किए बिना** लिंग भेदभाव को समाप्त करने और सभी परिवारों में असमान संपत्ति अधिकारों को हटाने का आह्वान किया गया है। मशविरा परचा में कहा गया है:

"समान नागरिक संहिता पर किसी आम सहमित के अभाव में आयोग ने महसूस किया कि आगे बढ़ने का सबसे अच्छा तरीका सामुदायिक कानूनों की विविधता को संरक्षित करना हो सकता है, लेकिन साथ ही यह सुनिश्चित करना होगा कि सामुदायिक कानून भारत के संविधान में दिए गए बुनियादी हक़ों का खंडन न करें।"

- (iii) 21वें विधि आयोग की रिपोर्ट (2018) की कौन सी सिफ़ारिशों को भाजपा की केंद्र सरकार ने पिछले चार वर्षों में लागू किया है? यदि 4 वर्षों में कोई कार्रवाई नहीं की गई, तो क्या इसका मतलब यह नहीं है कि भाजपा महिलाओं के संपत्ति अधिकारों की रक्षा के लिए प्रतिबद्ध नहीं है?
- (iv) खास तौर पर अनुच्छेद 44 यू सी सी को लागू करने के लिए 'राज्य को निर्देशित' नहीं करता है। बल्कि, यह राज्य से नागरिकों के लिए एक समान नागरिक संहिता को 'सुरक्षित करने का प्रयास' करने के लिए कहता है। ऐसा इसलिए नहीं है क्योंकि यू सी सी संविधान के भाग III (मौलिक अधिकार) में नहीं है।

इसलिए सवाल: पिछले 9 वर्षों में नागरिकों के लिए यू सी सी **सुरक्षित करने का क्या प्रयास** किया गया है? सर्वोच्च न्यायालय ने अपने कई प्रशंसित निर्णयों में स्पष्ट रूप से आदेश दिया है कि भाग IV (राज्य के नीति निर्देशक सिद्धांत) को

संविधान के भाग III (मौलिक अधिकार) के साथ **'सामंजस्यपूर्ण निर्माण**' में पढ़ा जाना चाहिए। सुप्रीम कोर्ट ने आगे स्पष्ट किया है कि जहां भाग IV **'राज्य के लक्ष्यों**' को निर्धारित करता है, वहीं भाग III उन लक्ष्यों को **'प्राप्त करने के साधन'** प्रदान करता है। इस अर्थ में, भाग IV के प्रावधानों को भी राज्य पर बाध्यकारी माना जाना चाहिए, जैसा कि भाग III के मामले में है।

इसी परिप्रेक्ष्य में हम केंद्र सरकार और 22वें विधि आयोग दोनों का ध्यान निम्नलिखित प्रश्नों की ओर आकर्षित करते हैं: (अ) वर्तमान में, भाजपा की केंद्र सरकार यू सी सी लागू करने के अपने फैसले को सही ठहराने के लिए अनुच्छेद 44 का हवाला दे रही है क्योंकि अब यू सी सी 2024 में आसन्न लोकसभा चुनावों के संदर्भ में धार्मिक आधार पर वोटों का ध्रुवीकरण करने के लिए एक राजनीतिक ज़रूरत बन गया है। इस रुख को तब भी कैसे उचित ठहराया जा सकता है जब देश के विभिन्न हिस्सों से विविध भू-सांस्कृतिक समुदायों द्वारा यू सी सी का व्यापक रूप से विरोध किया जा रहा है (देखें) ऊपर अनुभाग 'बी')? .

(बी) जैसा कि ऊपर बताया गया है, केंद्र सरकार का ध्यान देर से ही सही, अब अनुच्छेद ४४ पर गया है। हालाँकि, संविधान के भाग IV में समाज के सामाजिक-आर्थिक कल्याण और प्रस्तावना में निहित भारत के संवैधानिक दृष्टिकोण की पूर्ति के दृष्टिकोण से महत्वपूर्ण महत्व के कई अनुच्छेद शामिल हैं।

भाग IV के कुछ प्रावधान जिन पर राज्य को प्राथमिकता से ध्यान देना चाहिए

अनुच्छेद 38(2): आय, स्थिति, सुविधाओं और अवसरों में असमानताओं को कम करने और समाप्त करने का प्रयास करें।

अनुच्छेद 39 (ए): यह सुनिश्चित करें कि पुरुषों और महिलाओं को समान रूप से आजीविका के पर्याप्त साधनों का अधिकार हो।

अनुच्छेद 39 (बी): यह सुनिश्चित करें कि समुदाय के भौतिक संसाधनों का स्वामित्व और नियंत्रण इस प्रकार वितरित किया जाए कि आम हित पूरे हो सकें।

अनुच्छेद 39 (सी): सुनिश्चित करें कि आर्थिक प्रणाली के संचालन के परिणामस्वरूप धन और उत्पादन के साधनों का संकेंद्रण न आम हित के प्रतिकूल ना हो। /यदि यह अनुच्छेद लागू किया गया होता, तो न तो अडानी और अंबानी होते और न ही शहर के फुटपाथों पर सोने वाले लाखों गरीब नागरिक होते!/

अनुच्छेद 39 (डी): सुनिश्चित करें कि पुरुषों और महिलाओं दोनों के लिए समान काम के लिए समान वेतन हो।

अनुच्छेद 39 (ई): यह सुनिश्चित करें कि श्रमिकों, पुरुषों और महिलाओं के स्वास्थ्य और ताकत और बच्चों की कोमल उम्र का दुरुपयोग न हो। . . .

अनुच्छेद 39 (एफ): सुनिश्चित करें कि बच्चों को स्वस्थ तरीके से और स्वतंत्रता और गरिमा की स्थितियों में विकसित होने के अवसर और सुविधाएं दी जाएं और बचपन और युवावस्था को शोषण और नैतिक और भौतिक परित्याग से बचाया जाए। अनुच्छेद 46: राज्य लोगों के कमजोर वर्गों और विशेष रूप से अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति के शैक्षिक और आर्थिक हितों को विशेष देखभाल के साथ बढ़ावा देगा और उन्हें सामाजिक अन्याय और सभी प्रकार के शोषण से बचाएगा।

सवाल: पिछले 9 वर्षों के दौरान, ऊपर सूचीबद्ध भाग IV के किस अनुच्छेद ने भाजपा की केंद्र सरकार का राजनीतिक ध्यान आकर्षित किया और राज्य की नीति उक्त अनुच्छेद में निहित एजेंडे को पूरा करने की ओर निर्देशित की गई?

स्पष्ट है कि ऊपर सूचीबद्ध किसी भी अनुच्छेद को लागू नहीं किया गया या यहां तक कि सार्वजनिक खित्तों में उद्धृत भी नहीं किया गया क्योंकि इनमें समाजवादी विचारधारा का आह्वान किया गया है जिससे धन का समान वितरण हो सके, यही वजह है कि उनका हवाला देना असुविधाजनक है। इसके उलट, राजनीतिक सत्ता द्वारा अनुच्छेद 44 का व्यापक रूप से हवाला दिया जा रहा है क्योंकि यू सी सी 2024 में और उसके बाद भी सत्ता बनाए रखने के लिए ज़रूरी हो गया है।

च) यू सी सी: आगे का रास्ता

- 1. आइए हम सभी यह सुनिश्चित करने के लिए सतर्क रहें कि संविधान का पालन और कार्यान्वयन लगन से किया जाए, बिना किसी तरह कमी या विरूपण किए हुए।
- 2. संघीय संरचना और राज्यों/संघ शाषित इलाकों के संघीय अधिकारों को सम्मान करते हुए उनको अपनी समृद्ध विविधता व बहुलता के साथ यूसीसी का मसौदा बनाने की पहल में शामिल किया जाए ताकि भारत को यू सी सी के विभाजनकारी विचार से मुक्ति मिले।
- 3. यू सी सी का मसौदा तैयार करते समय किसी एक धर्म या संस्कृति को ज्ञान का एकमात्र स्रोत नहीं माना जाना चाहिए। इसके विपरीत, तर्कसंगतता, समानता और सामाजिक न्याय में अपनी जड़ों के लिए सामान्य रूप से जनजातीय और अन्य समुदायों और विशेष रूप से उत्तर-पूर्वी जनजातियों की समृद्ध परंपराओं को अपनाने का हर कारण है। उदाहरण बतौर, मेघालय की खासी जनजाति (विभिन्न हद तक जयन्तिया और गारो जनजाति भी) यू सी सी के लिए एक मॉडल हो सकती है क्योंकि यह निम्नलिखित उत्कृष्ट विशेषताओं वाला एक मातृसत्तात्मक समाज है:
 - (क) पुरुष नहीं, महिला को जन्म से ही संपत्ति का प्राकृतिक अधिकार;
 - (ख) शादी के बाद पति ही महिला के घर चला जाता है और वहीं रहता है;
 - (ग) तलाक का निर्णय लेने का अधिकार पत्नी और पति दोनों को समान है
 - (घ) नाजायज संतान की कोई अवधारणा ही नहीं है;
- (**ड**) पत्नी और पित के बीच तनाव के सभी मुद्दों को सबसे पहले, दादी माँ की अध्यक्षता में पूरे परिवार की बैठक में हल किया जाता है;
- (च) यदि मामला पति-पत्नी दोनों की संतुष्टि के अनुरूप हल नहीं होता है, तो वे गांव के दरबार में जाएंगे, जहां पूरे गांव की खुली बैठक में उनके मुद्दे का समाधान किया जाएगा;

- (**छ**) यदि पत्नी या पित में से कोई भी अभी भी संतुष्ट नहीं है, तो वे खासी जनजाति की उच्च स्तरीय जिला परिषद से संपर्क कर सकते हैं। इसलिए, नियमित न्यायालयों से संपर्क करने की कोई ज़रूरत नहीं है।
- 4. राष्ट्रव्यापी भू-सांस्कृतिक विविधताओं की समृद्ध और तर्कसंगत सांस्कृतिक परंपराओं से सीखें और **यदि ज़रूरी हो तो हिंदू** कोड बिल सहित यू सी सी को समृद्ध और परिवर्तित करने में उनकी तर्कसंगत विशेषताओं को शामिल करें।
- 5. 21वें विधि आयोग के अब तक नज़रअंदाज किए गए निष्कर्षों और सिफारिशों (ऊपर अनुभाग 'क' देखें) का लाभ उठाएं और उन्हें यू सी सी पर एक राष्ट्रीय विमर्श के निर्माण की प्रक्रिया में शामिल करें।
- 6. जैसा कि 21वें विधि आयोग ने सिफारिश की है.
- (ए) "आगे बढ़ने का सबसे अच्छा तरीका सामुदायिक कानूनों की विविधता को संरक्षित करना हो सकता है, लेकिन साथ ही यह सुनिश्चित करना भी कि सामुदायिक कानून भारत के संविधान के तहत गारंटीकृत बुनियादी हक़ों का खंडन न करें।"
- (बी) पूरे देश में एक समान नागरिक संहिता लागू करने और परिहार्य सामाजिक-राजनीतिक तनाव और विखंडन पैदा करने के बजाय, धर्म या संस्कृति की परवाह किए बिना, विभिन्न सामुदायिक कानूनों में जहां कहीं भी भेदभाव मौजूद है, उसे "खत्म" करें।

इस प्रस्तावना में निहित संवैधानिक दृष्टिकोण के अनुसार सामाजिक परिवर्तन और भारत के पुनर्निर्माण के लिए देश भर के सभी धार्मिक और सांस्कृतिक समुदायों के लिए हर किसी की जीत वाला एजेंडा है - एक ऐसा भारत जो अपने सभी नागरिकों को न्याय, सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक सुरक्षा; विचार, अभिव्यक्ति, विश्वास, विश्वास और पूजा की स्वतंत्रता; स्थिति और अवसर की समानता प्रदान करता है; और उन सभी के बीच व्यक्ति की गरिमा और राष्ट्र की एकता और अखंडता सुनिश्चित करने वाली बंधुता को बढ़ावा देता है

यू सी सी पर विमर्श के लिए अहम बातें: विविधता का जश्न मनाएं! विविधता की भावना को आत्मसात करें! विविधता को समृद्ध एवं संरक्षित करें! और विविधता से सीखें!

> - अभाशिअमं के अध्यक्ष-मंडल के सदस्य अनिल सद्गोपाल के सुझाव पर www.countercurrents.org/2023/07/ uniform-civil-code-the-way-forward/ में प्रकाशित मूल अंग्रेज़ी से गूगल द्वारा अनूदित

दीगर मुल्कों से तालीम की खबरें

दुनिया भर में शिक्षा के क्षेत्र में हाल में हुई घटनाओं का संक्षिप्त ब्यौरा शांतनव

संयुक्त राज्य अमेरिका: टेम्पल यूनिवर्सिटी में होप सेंटर फॉर कॉलेज, कम्युनिटी एंड जस्टिस द्वारा किए गए एक हालिया अध्ययन से पता चला है कि अमेरिका में लगभग चार स्नातक छात्रों में से एक और आठ स्नातक छात्रों में से एक को पर्याप्त भोजन नहीं मिलता है। इसका मतलब यह है कि अमेरिका में लगभग 4.5 मिलियन छात्रों को सही भोजन नहीं मिलता है। इसके अलावा, लगभग 8% स्नातक छात्र और 4% स्नातक छात्र, यानी 15 लाख छात्र बेघर हैं। सेरा गोल्ड्रिक-राब, जो होप सेंटर की अगुवा हैं और टेम्पल यूनिवर्सिटी में समाजशास्त्र और चिकित्सा की प्रोफेसर हैं, ने जैकोबिन पत्रिका को दिए एक विस्तृत साक्षात्कार में⁵ कहा है कि अफ्रीकी मूल के अमेरिकियों जैसे हाशिए पर रहने वाले समूहों में पर्याप्त भोजन न ले रहे छात्रों का प्रतिशत और भी अधिक है। ये निष्कर्ष अमेरिकी शिक्षा प्रणाली की ख़राब स्थिति को उजागर करते हैं, जहाँ कॉलेज/विश्वविद्यालय शिक्षा से कुल छात्रों का लिया कर्जा 1.8 ट्रिलियन डॉलर से अधिक है!

बाज़ील: जून में, राष्ट्रपति लूला ने बच्चों के लिए एक नया साक्षरता कार्यक्रम शुरू किया है जिसे क़ौमी पैमाने पर बच्चों को साक्षर करने की प्रतिबद्धता कहा गया है। कार्यक्रम का प्राथमिक उद्देश्य यह सुनिश्चित करना है कि ब्राजील के 100% बच्चों को प्राथमिक शिक्षा मिले। यह राज्य सकल घरेलू उत्पाद का 10% शिक्षा के लिए आवंटित करने के व्यापक राष्ट्रीय शिक्षा योजना (पी एन ई) के प्रमुख लक्ष्यों में से एक है। लूला ने राष्ट्रपति के रूप में अपने पिछले कार्यकाल में प्राथमिक विद्यालयों, उच्च विद्यालयों से लेकर सार्वजिनक विश्वविद्यालयों तक शैक्षिक बुनियादी ढांचे में सुधार के लिए पहले ही कई सुझाव पेश किए थे। हालाँकि, इनमें से कई उपायों को उनके उत्तराधिकारी ज़ेयर बोल्सोनारों ने वापस ले लिया, जिन्होंने खुले तौर पर आठ साल की उम्र के बच्चों को काम शुरू करने के लिए प्रोत्साहित किया था।

दक्षिण अफ़्रीका: दक्षिण अफ़्रीका के कक्षा चार के (औसतन 9-10 वर्ष की आयु) 80% से अधिक विद्यार्थियों को 11 आधिकारिक भाषाओं में से किसी एक को पढ़ने में कठिनाई होती है। ये निष्कर्ष प्रोग्रेस इन इंटरनेशनल रीडिंग लिटरेसी स्टडी (PIRLS) द्वारा किए गए एक अंतरराष्ट्रीय मूल्यांकन के हैं, जिसमें 50 से अधिक देशों ने भाग लिया था। दक्षिण अफ़्रीकी सरकार के अधिकारियों के प्राथमिक उद्देश्यों में से एक इस अध्ययन के नतीजे का इस्तेमाल शैक्षिक प्रणाली की ताकत और

⁵ www.jacobin.com/2023/08/college-expense-food-housing-insecurity. More on the report: www.hope.temple.edu/npsas

⁶ www.bbc.com/news/world-africa-65618058. The PIRLS-2021 report: www.pirls2021.org/wp-content/uploads/2022/files/PIRLS-2021-International-Results-in-Reading.pdf

कमजोरियों की पहचान करने और पाठ्यक्रम और नीति में पर्याप्त रूप से बदलाव करके प्रतिक्रिया देना था। अध्ययन का एक हिस्सा COVID-19 महामारी के दौरान हुआ, जिससे दुनिया के ज्यादातर दक्षिणी इलाक़ों (ग्लोबल-साउथ) में शिक्षा में मौजूदा किमयों को बढ़ा दिया - जिसके नतीजतन स्कूल बंद हो गए, स्कूल छोड़ने की दर में वृद्धि हुई, और संचित ज्ञान में महत्वपूर्ण गिरावट आई।

वियतनाम: 'द इकोनॉमिस्ट' के एक हालिया लेख में⁷ वियतनाम में स्कूलों की उच्च गुणवत्ता के पीछे के कारणों पर चर्चा की गई है। इसमें विश्व बैंक के हालिया आंकड़ों पर रोशनी डालते हुए कहा गया है कि सर्वांगीण सीखने के मूल्यांकन में वियतनामी छात्र ब्रिटेन और कनाडा में अपने समकक्षों से बेहतर प्रदर्शन करते हैं। इसकी मुख्य वजह शिक्षकों की गुणवत्ता और क्षमता है। दरअसल, वियतनामी शिक्षकों का लगातार प्रशिक्षण होता है और उन्हें अपनी कक्षाओं को अधिक आकर्षक बनाने के लिए पर्याप्त छूट दी जाती है। दरअसल, क्षेत्रीय असमानताओं को ध्यान में रखते हुए दूरदराज के इलाकों में तैनात शिक्षकों को अधिक वेतन दिया जाता है। यह मुख्य रूप से वियतनाम की कम्युनिस्ट पार्टी के निरंतर प्रयासों और प्रगतिशील नीतियों के कारण है: प्रांतों को अपने बजट का 20% शिक्षा पर खर्च करना होता है, समग्र पाठ्यक्रम को अक्सर लगातार सुधारा जाता है और शैक्षिक स्थानों का आधुनिकीकरण किया जाता है। यह मूलभूत रूप से कमजोर भारतीय पब्लिक स्कूल प्रणाली के बिल्कुल विपरीत है, जिसे निरंतर कम फंडिंग और लगातार निजीकरण के माध्यम से व्यवस्थित रूप से तबाह किया जा रहा है।

- मूल अंग्रेज़ी से गूगल द्वारा अनूदित



www.kinteract.co.uk/blog/the-digital-divide-and-technology-in-schools

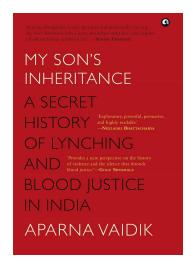
37

⁷ www.economist.com/asia/2023/06/29/why-are-vietnams-schools-so-good

पुस्तक समीक्षा

माई सन्स इनहेरिटेंस- ए सीक्रेट हिस्ट्री ऑफ ब्लड जस्टिस एंड लिंचिंग्स इन इंडिया', लेखक : अपर्णा वैदिक, Aleph Book Company, 2020, कीमत: ₹ 499.00

नये भारत में सुबह के अखबार से लेकर शाम के टीवी में समाचार तक हर जगह हिंसा की बू मौजूद दिखती है। हाल में मणिपुर की घटनाएं, गुजरात में हुई क्रूरताएँ, जाति आधारित हिंसा के बार-बार सामने आने वाले मामले, लिंचिंग-हिंसा की खबरें हमारे आम मानस में इस कदर घर कर गई हैं कि ऐसी घटनाएँ अब हमें झकझोरने में विफल रहती हैं, अगर उनमें हमें झकझोरने की पर्याप्त ताकत न हो। जर्मनी में नरसंहार के दौरान नाज़ियों की क्रूरता को समझने की अरेंट (Hannah Arendt) की कोशिश की तरह, अपर्णा वैदिक आज के भारत को समझने की कोशिश करती हैं, और अतीत मं जवाब ढूँढने के लिए इतिहास के अपने लेंस का उपयोग करती हैं। उनकी किताब 'माई सन्स इनहेरिटेंस' वर्तमान भारत को समझने के साथ-साथ यह विश्लेषण करने वाली किताब है कि हम अपनी आने वाली पीढ़ियों के लिए किस तरह की विरासत छोड़कर जा रहे हैं।



लेखक के बारे में: अपर्णा वैदिक एक इतिहासकार, लेखिका और अध्यपिका हैं। 2016 से वह लिंचिंग और दक्षिणपंथी सरकारी नीतियों के खिलाफ नागरिक समाज के विरोध प्रदर्शन का हिस्सा रही हैं। उन्होंने सेंट स्टीफन कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय और कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय में इतिहास का अध्ययन किया और इतिहास अध्ययन केंद्र, जे.एन.यू. से इतिहास से पी एच डी की डिग्री हासिल की। वह अशोका विश्वविद्यालय के इतिहास विभाग में अध्यापिका भी हैं। (स्रोत: विकिपीडिया)

समीक्षा:

"सर, आप इस पीढ़ी के लिए विरासत में क्या छोड़ रहे हो?"

फिल्म 'अय्यारी' में मेजर जय बख्शी कर्नल अभय सिंह से सवाल पूछते हैं। यह लगभग वही सवाल है जो यह किताब पिछली पीढ़ियों से पूछती है, भले ही एक अलग संदर्भ में। लिंचिंग की खबरें इतनी आम हो गई हैं कि इससे उन लोगों के मन में एक तरह की आत्मसंतोष पैदा हो गया है जो अपने घरों की सुरक्षा में आरामदायक कुर्सियों पर सुबह की चाय पीते हुए अपना दैनिक समाचार पत्र खोलते हैं। वही लोग जो सदियों से चले आ रहे रीति-रिवाजों का पालन बिना कोई सवाल किए करते आ रहे हैं, जो रुढ़िवादिता में आराम पाते हैं और इसे परंपरा का नाम देते हैं। वे महज शांतिपूर्ण दर्शक नहीं हैं, बल्कि अपराधों में भी समान रूप से भागीदार हैं, क्योंकि जैसा कि होलोकॉस्ट से बच गए लेखक एलीए व्हीज़ेल ने कहा था, "चुप्पी हमेशा जालिम की मदद करती है, मजलूम की कभी नहीं।"

यह किताब इस खूनी हिंसा की महज सरसरी आलोचना से आगे बढ़ कर, इसकी जड़ों को खोजने का प्रयास करती है, एक खोज जो हमारे महाकाव्यों के दरवाजे पर समाप्त होती है। आगे कहा गया है-

38

"विभिन्न रूपों में हिंसा को सामान्य बनाने और अदृश्य करने की अदाकारी - जो जैसा है वैसा बनाए रखने के नाम पर, अपमानजनक नामकरण, व्यक्तित्व को मिटाना, बर्बरीक को नंगा करना, एकलव्य का अंगूठा लूटना, कर्ण से उसका कवच कुंडल मांगना, यह सब किया गया। यह ख़ून माँगता इंसाफ था।"

एक ही संदेश देते बार-बार दुहराई घटनाएं - तुम्हारी अपनी दुनिया है और मेरी अपनी, दोनों एक-दूसरे से नहीं मिलेंगे। अन्यथा, सज़ा हमेशा दूसरे को ही मिलती थी। दूसरे ने-इतिहास या साहित्य में जिसकी जगह छीन ली गई -क्योंकि तालीम तक उन्हें पहुंच नहीं दी गई, दूसरे जिन्होंने वह सारा श्रम किया जो सुविधा-संपन्न लोगों को गंदा लगता था, दूसरे जिन्हों दिलत, हरिजन और बहुजन जैसे नाम दिए गए, लेकिन पूर्ण नागरिकों का कद कभी नहीं।

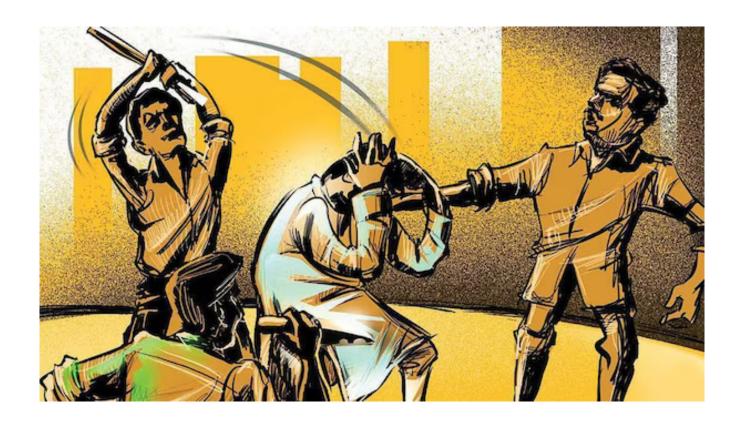
यह किताब इस मिथक को दूर करने का प्रयास करती है कि भारत की जड़ें अहिंसा में हैं, लिंचिंग एक अपवाद है। यह भारतीय समाज में पहले से मौजूद बुराई की मान्यता (banality of evil) को उजागर करने के लिए ऐतिहासिक और धार्मिक ग्रंथों का पता लगाती है, जो केवल रीति-रिवाजों के नाम पर छिपी हुई है।

यह सवाल पेश करती है- "यदि मिथक किसी समाज की भावनाओं का पोषण और उनकी पुष्टि करते हैं, तो कोई मिथकों में स्पष्ट हिंसा और इस धारणा के बीच कैसे तालमेल बैठा सकता है कि भारत आध्यात्मिकता, सिहष्णुता और अहिंसा की भूमि है?"

हालाँकि पूरी किताब इस हिंसक विरासत का विश्लेषण है, लेकिन वह एक आशावादी नोट पर समाप्त होती है- "यह आपकी विरासत है। आप अपनी विरासत के उन तत्वों को चुनने के लिए स्वतंत्र हैं जिन्हें आप अपनाना चाहते हैं, त्यागना चाहते हैं, जश्न मनाना चाहते हैं, उदासीन होना चाहते हैं या यहां तक कि जिनसे लड़ना चाहते हैं। आपकी विरासत के मायने होंगे जो आप उसे टेंगे।"

यह पुस्तक वर्तमान की हिंसा को अतीत की बुराइयों से जोड़ती है - वे बुराइयाँ जो रीति-रिवाजों और सामूहिक याददाश्त का हिस्सा होने के कारण आम हो गईं। यह उन लोगों को जरूर पढ़नी चाहिए जो उस नफ़रत को समझने की कोशिश कर रहे हैं जो एक पुरुष को एक गर्भवती महिला के पेट में छुरा घोंपने के लिए मजबूर करती है और ऐसी हिंसा जिससे एक महिला दूसरी महिला को भीड़ के हाथों बलात्कार के लिए छोड़ देती है।

(स्रोत: www.dnaindia.com/india/report-mob-lynching-7-instances-which-shook-india-2639925)



- 1. एन सी ई आर टी पाठ्यपुस्तकों को नए पाठ्यक्रम के अनुसार संशोधित करने के लिए एक 19 सदस्यीय राष्ट्रीय पाठ्यक्रम और शिक्षण सामग्री समिति का गठन किया गया है। समिति में सुधा मूर्ति (अध्यक्ष, इंफोसिस फाउंडेशन), शंकर महादेवन (संगीतकार) और संजीव सान्याल (अर्थशास्त्री) शामिल हैं।
- 2. कोलकाता स्थित राजा राम मोहन राय लाइब्रेरी फाउंडेशन के महानिदेशक प्रोफेसर अजय प्रताप सिंह ने हाल ही में नई दिल्ली में आयोजित लाइब्रेरी फेस्टिवल 2023 में खुलासा किया कि संस्कृति मंत्रालय 'पुस्तकालयों' को राज्य सूची से हटाकर समवर्ती सूची में डालने के लिए एक कानून लाने की योजना बना रहा है। केरल और कर्नाटक की सरकारों ने इस पर अपनी चिंता व्यक्त की है और कई लोगों को आशंका है कि यह कदम पुस्तकालयों के कामकाज में हस्तक्षेप करने और संघ परिवार की विचारधारा को फैलाने के व्यापक एजेंडे का हिस्सा है।

इस बदलाव से ऐसी स्थिति पैदा हो सकती है जिसमें पुस्तकालयों को संघ परिवार के प्रकाशनों से किताबें खरीदने और हिंदुत्व प्रचार प्रसार के लिए कार्यक्रम आयोजित करने के लिए पुस्तकालयों का उपयोग करने देने के लिए मजबूर होना पड़ेगा।

3. केंद्र सरकार ने पांच निजी तौर पर प्रबंधित डीम्ड विश्वविद्यालयों में प्रमुख पदाधिकारियों को नियुक्त करने के अधिकार ले लिए हैं, जिन्हें पर्याप्त सरकारी धन मिलता है। संस्थान हैं TISS, मुंबई; दयालबाग शैक्षिक संस्थान, आगरा; गुजरात विद्यापीठ, अहमदाबाद; गृह-विज्ञान-शिक्षा और महिलाओं के लिए उच्च शिक्षा संस्थान अविनाशलिंगम, कोयंबटूर, और गुरुकुल कांगड़ी, हरिद्वार।

TISS जैसे संस्थानों में अपेक्षाकृत प्रगतिशील शैक्षणिक संस्कृति रही है और इस बदलाव से संस्थागत स्वायत्तता में सरकार का हस्तक्षेप होगा।

4. एनईपी 2020 के एक भाग के रूप में एच ई आई के लिए पी ओ पी योजना के लिए खोले गए प्रोफेसर ऑफ प्रैक्टिस पोर्टल को 4300 से अधिक आवेदन प्राप्त हुए हैं।

किसी भी HEI में PoP की अधिकतम संख्या स्वीकृत पदों के 10% तक सीमित है और नियुक्ति की अधिकतम अविध 4 वर्ष है। इन पदों के लिए औपचारिक शैक्षणिक योग्यता आवश्यक नहीं समझी जाती है।

असम के मुख्यमंत्री हिमंत बिस्वा शर्मा के भाई दिगंता बिस्वा शर्मा को डिब्रूगढ़ विश्वविद्यालय में भारतीय ज्ञान प्रणाली पढ़ाने के लिए पीओपी के रूप में शामिल होने के लिए आमंत्रित किया गया था। इस तरह के उदाहरण इस तथ्य की ओर इशारा करते हैं कि यह योजना विश्वविद्यालय स्थानों में भाई-भतीजावाद और भाजपा/आरएसएस विचारकों की घुसपैठ को प्रोत्साहित करने के लिए है।

- 5. उच्च शिक्षा पाठ्यक्रम में भारतीय ज्ञान प्रणालियों को शामिल करने के लिए यूजीसी द्वारा दिशा-निर्देश जारी किए गए हैं। दिशा-निर्देश इस वजह से विवादास्पद रहे हैं कि इनमें भारतीय ज्ञान को वैदिक ज्ञान प्रणालियों तक सीमित करके चित्रित किया गया है। यह हिंदुत्व प्रचार को पाठ्यक्रम में शामिल करने का एक और साधन भी है।
- 6. यू जी सी के अनुसार पाठ्यक्रम संशोधन के तहत दिल्ली विश्वविद्यालय में अर्थ-शास्त्र और इतिहास विषयों के पाठ्यक्रम में भारी बदलाव देखा गया। जबिक दिल्ली विश्वविद्यालय के शिक्षकों ने आरोप लगाया है कि संबंधित विभाग से परामर्श किए बिना बी ए अर्थशास्त्र के स्नातक पाठ्यक्रम से "भेदभाव के अर्थशास्त्र" पर एक पेपर हटा दिया गया है, वहीं स्नातक स्तर के इतिहास पाठ्यक्रम में कथित तौर पर 'ब्राह्मणीकरण' और असमानता जैसे विषयों पर पेपर हटा दिया गए हैं। इसके बजाय उन अध्यायों में मातृसत्तात्मक नज़िरया का पिरचय दिया गया जिनमें पहले पितृसत्ता पर बातें थीं।

- अभाशिअमं सचिव-मंडल की सदस्य विजयलक्ष्मी द्वारा एकत्रित -गूगल द्वारा अनूदित



देश भर में मंच के सदस्य संगठन विविध गतिविधियों में सक्रिय रहे हैं, पर ताकील के पास उनकी रपटें नहीं पहुँच रही हैं। फिलहाल हम सिर्फ कुछ रपटें पेश कर रहे हैं। सभी सदस्य संगठनों से गुजारिश है कि वे अपनी गतिविधियों पर संक्षिप्त रपटें हमें aifrtenewsletters@gmail.com पर भेजें।

प. बंगाल: शिक्षा सम्मेलन

17 जून को अभाशिअम प. बंगाल समूह ने अन्य रैडिकल समूहों, जैसे APDR, CESTUSS, नेहाई, आज़ाद गण मोर्चा, समाज बिग्यान ओ प्रकृति परिचय मैगज़ीन, निस्पोलोक मैगज़ीन, सिक्खा संलाप, PDSF, AISA, ASSPS, पीटीएबी, डब्ल्यूपीएसयूएफ, आखाईए और डीवाईएसए के साथ मिलकर एक शिक्षा सम्मेलन का आयोजन किया। यह सम्मेलन हालिया पाठ्यक्रम परिवर्तन और वैज्ञानिक नज़रिए पर केंद्रित था।



विभिन्न समूहों के वक्ताओं ने सदन को संबोधित किया जिसमें 81 लोग उपस्थित थे।

कार्यक्रम का संचालन अशोक मुखोपाध्याय ने किया। वक्ताओं की सूची: कुशल कर (पीडीएसएफ), मिलन समद्वार (एएसएसपीएसआई), संजीब आचार्य (एपीडीआर), सुगता रे (समाज विज्ञान ओ प्रकृति परिचय पत्रिका), तुहिन मापारु (आजाद गण मोर्चा), सुब्रत बागची (सेस्टस), अनिंद्य चट्टोपाध्याय (सिक्खा संलाप), जगदीश सरदार (निस्पोलोक), हिंडोल (DYSA), और बरनाली मुखर्जी (AIFRTE)।

आंध्र प्रदेश

आंध्र प्रदेश के श्रीकाकुलम, विजयनगरम, विशाखापत्तनम, पूर्वी गोदावरी, गुंटूर, तिरूपित, चित्तूर, कुरनूल, नंद्याल और अनंतपुर जिलों में एनईपी 2020 के कार्यान्वयन के खिलाफ, बस्तियों में प्राथमिक विद्यालयों से कक्षा 3,4,5 को दूर के हाई स्कूलों में स्थानांतिरत करने, पाठ्यपुस्तकों के सांप्रदायीकरण, राज्य बोर्ड स्कूलों में सीबीएसई निर्देशों को लागू करने और 50,677 स्कूल शिक्षक रिक्तियों को भरने की मांग करते हुए प्रदर्शन हुए।



एपीटीएफ (1938) और डीटीएफ के नेतृत्व में सरकारी स्कूल टीचरों ने अनुशासनात्मक कार्रवाई की सरकार की धमिकयों के बावजूद प्रदर्शनों में भाग लिया। प्रदर्शन में एआईएसएफ और पीडीएसयू के दो समूहों के छात्र कार्यकर्ताओं ने भी भाग लिया। आंध्र प्रदेश सेव एजुकेशन कमेटी (एपीएसईसी) और एआईएफआरटीई के बैनरों वाले ये प्रदर्शन उपरोक्त छात्र और शिक्षक संगठनों द्वारा आयोजित किए गए थे।

दिल्ली

26 AUGUST 2023 को क्रांतिकारी युवा संगठन ने मुजफ्फरनगर के नेहा पब्लिक स्कूल की शिक्षक तृप्ता त्यागी द्वारा मुस्लिम बच्चे को पिटवाने और सांप्रदायिक मानसिकता को बढ़ावा देने के विरोध में यू पी भवन के सामने प्रदर्शन किया।



पिछले महीनों में मंच की ओर से कई विज्ञप्तियाँ जारी की गई हैं। ज्यादातर अंग्रेज़ी में जारी इन विज्ञप्तियों को मंच की वेबसाइट aifrte.in पर पढ़ा जा सकता है। यहाँ सिर्फ हिन्दी में जारी विज्ञप्ति शामिल की गई है।

16 जून 2023 को जारी प्रेस विज्ञप्ति

कठोर यूएपीए कानून के तहत जाने-माने बुद्धिजीवी प्रोफ़ेसर जी हरगोपाल सिहत 150 अन्य बुद्धिजीवियों और नागरिक अधिकार कार्यकर्ताओं के ऊपर तेलंगाना सरकार द्वारा एफ़आइआर दर्ज करने की कार्यवाही पर अखिल भारत शिक्षा अधिकार मंच (अभाशिअम) अपना आक्रोश व्यक्त करता है। ग़ौरतलब है कि प्रोफ़ेसर एम गंगाधर (कोषाधिकारी, अभाशिअम), श्री के रविचंदर (सदस्य राष्ट्रीय कार्यकारिणी) तथा तेलंगाना के जनवादी शिक्षक मंच के छह अन्य लीडर इस सूची में शामिल हैं।

सरकार को किसी भी व्यक्ति के ख़िलाफ़ बग़ैर किसी सबूत के कठोर कार्यवाही की ताक़त देने वाले यूएपीए जैसे क़ानून के तहत कार्यवाही करना एक तरह का साजिशाना रवैया दिखाता है ख़ासतौर पर तब जब जिस व्यक्ति को निशाना बनाया गया है वह अपनी संवैधानिक प्रतिबद्धता, निष्ठा और उच्च आचरण के लिए जाना जाता हो।

प्रोफेसर हरगोपाल सम्मानित जन बुद्धिजीवी हैं। खुद सरकार ने रेडिकल समूहों से संवाद करने के लिए उनकी सहायता ली है क्योंकि लोकतांत्रिक प्रक्रिया और नागरिक अधिकार के मुद्दों पर उनकी गहरी समझदारी है और इस वजह से सभी समूह उनका सम्मान करते हैं।

हम एक स्वर में इस एफ़ आइ आर को वापस लेने की माँग करते हैं। साथ ही हम यूएपीए क़ानून की वापसी की मांग भी करते हैं जिसके जरिए सरकार की दमनकारी मशीनरी द्वारा निर्दोष बुद्धिजीवियों और कार्यकर्ताओं पर गैरकानूनी कार्यवाहियाँ की जाती हैं।

साथी संजीव माथुर की याद में

यह संजीव माथुर आखिर कौन था जिसको आज तहेदिल सलाम करने उसके सैंकड़ों साथी यहां इकट्ठे हुए हैं? वह किसी विश्वविद्यालय का मशहूर प्रोफ़ेसर नहीं था, ना ही किसी अखबार का जाना-पहचाना लेखक था ना ही उसके पास कोई धन-दौलत थी ना ही उसके नाम बीता भर भी ज़मीन थी। हमें फ़क्र है कि उसे राजसत्ता ने कभी पद्मश्री नहीं दिया, ना ही देने का सोचा भी होगा और ना ही किसी राष्ट्रीय बुद्धिजीवी सम्मेलन में उसको न्यौता दिया गया होगा। उसके महज़ 48 साल की उम्र में गुज़र जाने की खबर शायद ही किसी मीडिया में छपेगी तो फिर वह आखिर कौन था जिसको आज हम सब याद करने दूर-दराज़ से अपने-आप ही यहां चले आए हैं?



अगर इटली के विश्व-विख्यात दार्शिनिक ग्रामसी की इत्तफ़ाक मुलाकात संजीव से हुई होती तो वे उसे एक अनूठे ज़मीनी बुद्धिजीवी (Organic Intellectual) का तमगा ज़रूर देते। हालांकि, यह दीगर बात है कि संजीव उस बहुमूल्य तमगे को भी अपनी किताबों के ढेर में रखकर भूल जाते, और आप सबसे हैरान होकर पूछते कि मैं उस तमगे का क्या करूं? उनके इस अजीब सवाल का जवाब आप के पास भी नहीं होता सिवाय इसके कि आप सब साथी संजीव के साथ मिलकर यह फ़ैसला ज़रूर लेते कि देश के विभिन्न शोषित व उत्पीड़ित तबकों को भी ग्रामसी का ज़मीनी बुद्धिजीवी (Organic Intellectual) कैसे बनाया जाए। संजीव को यह मालुम था कि जब तक देश के करोड़ों बहुजनों को ज़मीनी बुद्धिजीवी नहीं बनाया जाएगा तब तक न तो देश गैर-बराबरी व शोषण से मुक्त हो पाएगा और ना ही क्रांतिज्योति सावित्रीबाई फुले, फ़ातिमा शेख, ना ही महात्मा जोतिबा फुले व शाहुजी महाराज (महाराष्ट्र), ना ही नारायण गुरू व आयनकली (केरल), ना ही आयोथी थस्सार व पेरियार (तिमलनाडु), ना ही गुरजादा अप्पाराव व कुंडुकुरी वीरसालिंगम (आंध्र प्रदेश), ना ही पंजाब के महान सिख गुरूओं, ना ही संत कबीर (उत्तर प्रदेश) व शंकर देव (असम) और ना ही डॉ. बाबासाहेब अंबेडकर का देश को ब्राह्मणी वर्चस्व और मनुस्मृति की जाति (वर्ण-व्यवस्था) व पितृसत्ता की बेड़ियों से मुक्त करने का सपना साकार हो पाएगा।

भारत के तमाम नामी-गिरामी राजनेताओं, बुद्धिजीवियों व बहुजनों के नामपर राजनीतिक सत्ता हथियाने में माहिर सत्ताधारियों को ज़ोरदार चुनौती देते हुए संजीव ने अपनी मसूम नौजवानी में ही समझ लिया था कि बहुजनों को — जो देश के 85 फ़ीसद नागरिक हैं — अपनी सदियों पुरानी ब्राह्मणी बेड़ियों को तोड़ने और मनुस्मृति से मुक्त होने के लिए जितनी ज़रूरत महात्मा फुले और डॉ. बाबासाहेब अंबेडकर की है उतनी ही ज़रूरत मार्क्स व एंगेल्स की भी है, यानी बहुजनों की मुक्ति का रास्ता महात्मा फुले और डॉ. बाबासाहेब अंबेडकर को मार्क्स व एंगेल्स के साथ जोड़कर ही निकलेगा। इसीलिए संजीव के साथियों ने जो काम गांव के स्कूलों में हालिया शुरू किया उसमें बहुजनों की शिक्षा को समाजवाद और इंसानियत से जोड़ा जिसके बगैर शिक्षा अधूरी है और अधकचरी भी।

यह तय है कि संजीव की अंतर्दृष्टि आज नहीं तो कल भारत के सामाजिक परिवर्तन में हर हाल एक ऐतिहासिक भूमिका निभाएगी! इसलिए संजीव को सबसे बड़ी श्रद्धांजिल यही होगी कि हम जैसे पढ़े-लिखे डिग्रीधारी लोग देश के करोड़ो शोषितों व उत्पीड़ितों को अपने 'मन की बात' सुनाकर कर्तई आत्ममुग्ध नहीं होंगे बल्कि हम देश के 140 करोड़ लोगों के 'मन की बात' सुनकर अपने अंदर झाँकेंगे और भारत के सामाजिक-राजनीतिक व आर्थिक नवजागरण (रेनेसां) का क्रांतिकारी रास्ता बहुजनों के साथ मिलकर खोजेंगे और बनाएंगे।

जैसा कि साथी संजीव हम सब के साथ मिलकर गाया करते थे: "शहीदे-ए-आज़म भगतसिंह, तू हमारे खून के हर कतरे में ज़िंदा है !" हम भी गाएंगे, ज़ोर से गाएंगे, बार-बार गाएंगे

> "साथी संजीव, तेरे अधूरे अरमानों को हम पूरा करेंगे !" और तू हमारे खून के हर कतरे में ज़िंदा है, हमेशा ज़िंदा रहेगा !" हम 'भारत के लोग' होंगे कामयाब, एक दिन !

भोपाल से शशि मौर्य और अनिल सद्गोपाल 2 जुलाई 2023 को संजीव माथुर की स्मृति में आयोजित सभा में उद्घाटन सत्र में पढ़ी गई

FORM IV

- 1. Place of publication: 11-4-169/1/A, Flat no 306, Pleasant Apartments, Red Hills, Lakadikapool, Khairatabad, Hyderabad 500004
- 2. Periodicity of its publication: Quarterly
- 3. Printer's Name: Donkada Ramesh Patnaik

Nationality: Indian

 ${\it Address: } 11\text{-}4\text{-}169/1/A, Flat no 306, Pleasant Apartments, Red Hills, Lakadikapool, Khairatabad, Hyderabad 500004$

4. Publisher's Name: Donkada Ramesh Patnaik

Nationality: Indian

Address: 11-4-169/1/A, Flat no 306, Pleasant Apartments, Red Hills, Lakadikapool, Khairatabad, Hyderabad 500004

5. Editor's Name: Donkada Ramesh Patnaik

Nationality: Indian

 ${\it Address: } 11\text{-}4\text{-}169/1/A, Flat no 306, Pleasant Apartments, Red Hills, Lakadikapool, Khairatabad, Hyderabad 500004$

- 6. Names and addresses of individuals who own the newspaper and partners or shareholders holding more than one per cent of the total capital: None
- I, Donkada Ramesh Patnaik, hereby declare that the particulars given above are true to the best of my knowledge and belief.

Date: Signature of Publisher

ट्रेन में मुसलमान

मौमिता आलम

मेरे अब्बा तलाश कर रहे हैं अपनी बेटियों को वह अपनी बेटियों को भूल गए हैं! उनकी बेटियां अब उन्हें बाबा पुकारती हैं, अब्बा से बाबा यह स्थिर मन से अस्थिर मन की एक यात्रा है! एक भारतीय की 'भारतीय' बनने की बेहद कठिन कोशिश!

देने से पहले मिरी अम्मी कई बार चेक करती है भईया का लंचबॉक्स.

और वह डब्बे पर बड़े बड़े अक्षरों में मार्कर से लिख देती हैं अंडा करी और ब्रैकेट में लिखती हैं (डीम-भात).

सुन्न पड़ जाती है वह जब कोई गलती से अंडा करी को गोश्त समझ लेता है!

मेरा भईया रोज़ लोकल ट्रेन में आना जाना करता है.

मेरी मां को नहीं पता वे पालक साग को भी गोश्त समझने की भूल कर सकते हैं! मेरी भाभी उनकी दाढ़ी से खींच निकालती है हरेक बाल, इस क़दर के मेरा भाई दर्द से चीखने लगता है. वह खौफ़ में है के किसी को उसके पति के नाम की ख़बर न हो जाए!

खिड़की वाली सीट पर बैठे बैठे मैं हरेक सहयात्री का करती हूं मुआयना हर बार इंजन की तीखी आवाज़ मुझे सहमा देती है!

टीटी जब पूछता है मेरा नाम मैं हौले से फुसफुसाती हूं अपना पहला नाम 'मौमिता'. ग़ैर ज़रूरी अपना सरनेम नहीं बोलती उस वक्त 'आलम'!

बंद करके अपनी आंखें मैं दुआ करती हूं के जल्दी से मेरा स्टेशन आ जाए!

लेकिन भाइयों! मुझे किस भाषा में दुआ करनी चाहिये ?

(मूल अंग्रेज़ी से अनुवाद – अमिता शीरीन)



 $\underline{www.kathmandupost.com/columns/2021/11/13/modi-s-anti-\\muslim-jihad}$